द्वितीय अध्याय

उपेन्द्रनाथ अश्क के समस्या नाटक

अध्याय द्वितीय

हिंदी के समस्या नाटक - स्वरूप

समस्या नाटक अंग्रेजी के ` प्रॉब्लेम प्ले ` शब्द का हिंदी रूपांतर भी हैं । ` प्रॉब्लेम प्ले ` के रूप में इस नाट्य विधा के नामानुकरण का श्रेय ` सिडनी ग्रंथी नामक व्यक्ति को हैं, जिसने इसका सर्वप्रथम प्रयोग १९ वी शताब्दी के नवे दशक के बुध्दिवादी नाटकों के लिए अनादर और उपेक्षा भाव से अप्रैल १८९६ को ` द थिएटर ` नामक पत्रिका में प्रकाशित ` मार्चिंग टू आवरड्रूम ` शीर्षक अपने निबंध में किया । ` प्रॉब्लेम प्ले ` नाम यद्यपि स्पष्ट और सुरुचिपूर्ण नहीं हैं, परंतु गंभीर नाटकों के लिए साहित्य समीक्षा क्षेत्र में प्रमाणित हो गया हैं । ` मार्टिन ऐल्होंग ` ने स्वीकार किया हैं कि ` प्रॉब्लेम प्ले ` नाम उन नये यथार्थवादी और बुध्दिवादी नाटकों विशेषत: उनके अंग्रेजी प्रकारों के निमित आया हैं, जो यूरोप में १९ वी शताब्दी के पिछले दशकों में विकसित हुए थे । `[१]

रेम्सडेन वॉमफोर्ड ने ` द प्रॉब्लेम प्ले ॲण्ड इन्फ्लुएंस ऑन मॉडर्न लाईफ ॲण्ड थॉट ` अपने इस ग्रंथ में समस्या नाटक को ` एक विशिष्ट प्रकार का नाटक ` माना हैं, उसकी परिभाषा नही दी हैं - वे बस्स । इतना ही कहते हैं कि प्रत्येक महान नाटक समस्या नाटक होता हैं । `[२]

समस्या नाटकों के सबसे अधिक प्रतिष्ठाप्राप्त बर्नार्ड शॉ ने समस्या नाटक की परिभाषा इस प्रकार दी हैं --

` वह मानव की इच्छा और उसके परिवेश के बीच के संघर्ष का दृष्टांत रूप में प्रस्तुतीकरण हैं । `[३]

---

१ आर.सी.गुप्त - द प्रॉब्लेम प्ले - पृ. २१-२२ ।

२ द प्रॉब्लेम प्ले अण्डड इन्फ्लुएंस ऑन मॉडर्न लाईफ ॲण्ड थॉट - पृ.१४ ।

३ प्लेज अन प्लेजेन्ट की भूमिका (द ऑथर्स एपोलॉजी) ।

कतिपय विद्वान मानते हैं कि समस्या नाटक उन स्थितियों से सम्बध्द हुआ करते हैं, जो जीवन में केवल नैतिक और सामाजिक समस्याओं के रूप में अमूर्त और मानव - प्रकृति तथा उसकी विलक्षण विशिष्टताओं से सर्वथा निस्संग - उत्पन्न होती हैं। कुछ विद्वान 'समस्या नाटक' के 'समस्या' शब्द का औचित्य इस बात पर सिध्द करना चाहते हैं, कि 'समस्या नाटक एक प्रश्न वाचक चिन्ह के साथ समाप्त हुआ करता है।

'वॉमफोर्थ और 'बेंटले' इस बारे में कहते हैं कि 'प्रत्येक गंभीर नाटक एक परिप्रश्नात्मक टिप्पणी के साथ समाप्त हुआ हैं।'[१]

समस्या नाटक १८वी शताब्दी के भावनावादी नाटकों के प्रतिक्रियास्वरूप उद्‌भूत होकर 'ड्रामें के तद्वत सिध्द हुआ जो दुखान्त न होते हुए भी गंभीर हुआ करता था और जिसमें हास और रूदन की दो परस्पर भिन्न वृत्तियों के मध्य दोलायमान जीवन की प्रस्तुति हुआ करती थी।

समस्या नाटक की सबसे बडी विशेषता यह है, कि उसने जीवनपर पडे हुए मिथ्यत्व के आवरण को हटाने की चेष्टा की। स्वीकृत तथा प्रचलित विश्वासों, रूढियों की धज्जियाँ उडा दी और कुरूपता तथा मलिनता के सामाजिक यथार्थ को अनावृत करके खडा कर दिया। इस अर्थ में समस्या नाटक प्रमनिवृति का नाटक है।

समस्या नाटककारों ने नयी पीढी को मानव-विचार और व्यवहार को ग्रस लेनेवाले, झूठे अंधविश्वासो की दासता और रूढियों के शिकंजे से मुक्त किया। उन्होंने मध्यवर्गीय आचार और जीवनादर्श की इस प्रकार कठोर आलोचना की, कि समस्या नाटक का वास्तविक लक्ष्य ही मध्यवर्गीय प्रतिष्ठा के आधारभूत वास्तविक सत्य की गवेषणा बन गया।

समस्या नाटकों ने न्याय - संस्थानों की उपयोगिता के विषय में

---

१ रैम्सडेन वॉमफोर्थ - द प्रॉब्लेम प्ले अॅण्ड एट्स इन्फलुएंस ऑन मॉडर्न लाइफ अॅण्ड थॉट - पृ.१३।

पुनर्विचार का प्रश्न उठाकर सुझाया कि प्रचलित न्यायतंत्र दुर्बलों के हितों की दृष्टि से अतिचारी और कठोर ही सिद्ध होता है ।

समस्या नाटक का प्रतिपाद्य होता है - सामाजिक सीमाओं के भीतर के विरोधों और संघर्षों को प्रकट करना । व्यक्ति और उसके परिवेश के बीच होनेवाले इस संघर्ष में समस्या नाटककारों ने अपने दिमाग के लिए खुराक और अपने नाटकों के लिए मसाला मिलता है ।

यूरोपीय नाटक क्षेत्र में नये दृष्टिकोण के प्रवक्ता " इब्सन " थे । समस्या नाटक गंभीर विचारों और कल्पनाओं को प्रकट एवं संकेतित करता है और मानव के जीवन एवं नियति को प्रभावित करनेवाले प्रश्नों को उठाता है और इन्हें विश्लेषणात्मक रूप से विवेचन का विषय बनाता है ।

समस्या नाटककार अपने विचारों को एक दार्शनिक, वक्ता, समाजशास्त्री या पर्यवेक्षक की तरह उपस्थित नहीं कर सकता । समस्या नाटक की सर्वाधिक महत्वपूर्ण वस्तुविवेचित समस्या नहीं उसके द्वारा प्रस्तुतकार्य और जीवनदृश्यों में अंतर्लीन है । नाटककार का उद्देश्य मानव-चरित्र का निदर्शन है, वृत तैयार करना नहीं । उसके विचार नाटकीय पात्रों के संघर्षों और अनुभवों के अभिनय के माध्यम से ही होती है, वे परिवेश और चरित्र के अनुसार, तर्कानुसार मज्जा और रक्तगत यथार्थों से ही उभरेंगे ।

समस्या नाटक के लिए जरूरी है, कि - आकार के सम्बन्ध में गहरी सतर्कता और अपेक्षित साध्य की दृष्टि से उपयुक्त साधन का यथोचित अनुकूलन । नाटककार घटनाओं, तथ्यों का जैसा तैसा विपर्यस्त संग्रह प्रस्तुत नहीं करता । उसकी कला का आग्रह है कि उसकी परियोजना क्रमबध्द और प्रयत्न सुनिर्दिष्ट हो, इसीलिए उसके लिए विन्यास और चयन अत्यावश्यक होते हैं । नाटकीय स्वरूप विधान की माँग होती है - वस्तु का स्पष्ट और प्रभावशाली व्यवस्थापन तथा तथ्य और ब्यौरों का सतर्क विन्यास ।

समस्या नाटक के शिल्प के अभिन्न अंग - कार्य, चरित्र, संवाद आदि नाटककार के उद्देश्य से स्वतंत्र न हो, उसके साथ एकमेव होते हैं ।

समस्या नाटक न तो पुराने चलन के षड्यंत्रों का नाटक है और न वह शतप्रतिशत प्राविधिक कौशल या बाजीगरी का प्रदर्शन न हो । समस्या नाटककार का उद्देश्य उन घटनाओं और तथ्यों का समूह तैयार करना होता है - जो उसके प्रतिपाद्य को नाटकीय तर्क और संभावना की हत्या किये बिना यथापेक्षा अभिव्यक्त कर सके । इसलिए उसे अपने कथानक और प्रतिपाद्य का इसतरह अंकन, अनुकूलन और एकीकरण करना पड़ता है, कि पहला दूसरे का अकृत्रिम, सहज और समन्वयात्मक संवाहक बन जाये । समस्या नाटक की संरचना के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है, कि उसमें `क्रियात्मक कथानक` और `विचारात्मक कथानक` बीच एक प्रकार का प्रच्छन्न अन्योन्याश्रय सम्बन्ध गुंफित रहता है । किसी भी प्रभावशाली कलात्मक कृति में `विचारात्मक कथानक` उसके `क्रियात्मक कथानक` के न केवल समानान्तर चला करता है बल्कि उसके साथ पूर्णतः संतुलित भी होता है ।

समस्या नाटकों ने नाटकीय संरचना के लिए संकलनत्रय की प्रणाली को सैद्धान्तिक अनिवार्यता, आदर्श के रूप में ग्रहण नहीं किया ।

कोई भी समस्या नाटककार नाटकीय संरचना की निबिड़ता तथा कार्य के सुनियोजित संकल की रक्षा के निमित उसकी उपेक्षा नहीं कर सकता । समस्या नाटक की संरचना, मकड़ी के जाल की तरह पूर्ण, संघटनात्मक इकाई होती है और उसका प्रत्येक सूत्र उस केन्द्रीय अभिरुचि से इस प्रकार गुंथा हुआ होता है कि समस्या नाटक वहाँ से शुरु होता है, कि समस्या नाटक वहाँ से शुरु होता है, जहाँ पूर्ववर्ती नाटक समाप्त हो जाया करते हैं और वह उस लंबी घटना-शृंखला के चरमबिंदु को ही रूपायित करता है, जो उसके आरंभ की प्रेरणा है ।

समस्या नाटक का उपसंहार सर्वोत्य प्रभावों का सुबध्द रूप होता है । समस्या नाटककार जीवन के कठोर यथार्थ की उपेक्षा नहीं कर सकता, बल्कि वहीं तो उसकी कृति की प्रेरणा होता है ।इसलिए समस्या नाटक बहुधा प्रश्नवाचक टिप्पणी

के साथ समाप्त होता है । समस्या नाटककारों ने कथावस्तु की ही भाँति कार्य और कथोपकथन का प्रयोग प्राचीन रूढ़ियों से स्वतंत्र होकर किया तथा इस बात का सम्यक ध्यान रखा, कि वे परिष्कृत रुचि के सर्वथा अनुकूल हो ।

समस्या नाटकों में प्रस्तुत संभाषण दृश्य उनके उद्देश्यों को विविध बहानों में बड़ी तीक्ष्ण अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं । समस्या नाटककार अपने उद्देश्योंपर विभिन्न और परस्परविरोधी कोणों से इस तरह प्रकाशबिंब डालते हैं, कि वे एक दूसरे को काटते चलते हैं और एक बौध्दिक-वाक्चक्र उत्पन्न किया करते हैं । समस्या नाटककार अपने पात्रों के मनोविज्ञान को रेखांकित करता हुआ चलता है । समस्या नाटकों के पात्र किसी भी परिस्थिति में सामाजिक और अबौध्दिक प्राणी नहीं होते वे समसामयिक जीवन के अतिशून्य प्रबुध्द, सजीव, गंभीर सामाजिक होते हैं । वे अपने चरित्र और प्रारब्ध पर सामाजिक, आर्थिक परिवेश के दबाव के प्रति अत्यधिक सचेष्ट होते हैं, इसीलिए उनके द्वारा अभिव्यक्त विचार उधार लाये हुए नहीं, बल्कि वैयक्तिक अनुभवों एवं धारणाओं से उत्पन्न हुए से लगते हैं ।

समस्या नाटककार अपना सारा ध्यान सामाजिक जीवन की उलझनों, विडम्बनाओं, यथार्थों से व्युत्पन्न मनोवैज्ञानिक ऊहापोहों की ओर निर्देशित करता है - उसके नाटकीय अर्थों के स्वरूप के अंतर्गत भावों और विचारों की अभिव्यक्तियाँ भी आ जाती हैं । यहीं कार्य है, कि वह भौतिक कार्यों को भावात्मक और बौध्दिक स्तरतक पहुँचा कर उदात्त बना दिया करता है ।

समस्या नाटक वैसे आधुनिकता की देन है, उपज है, परंतु उसके बीज भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में नाटक की उत्पत्ति की जो कथा विदित है, उससे पता चलता है, कि संस्कृत के नाटकों में 'समस्या' की प्रधानता थी । समाज की जो विकृतियाँ थी, उसे हटाने के लिए संस्कृत प्रहसनों की रचना की गयी । समस्या नाटक आधुनिक युग के सामाजिक, मानसिक ऊहापोह से निर्मित समस्याओं से सम्बन्धित है । औद्योगिकता के कारण ग्रसित मानवीय जीवन के अनेक गहमागहमी को अपनी गहरी मानसिकता, सशक्त लेखनी से अनेक नाटककारों ने सजीव बनाया है ।"[1]

---

1 हिंदी के समस्या नाटक - डॉ. विक्रमसिंह

हिंदी के समस्या नाटक - नाटककार --

हिंदी के समस्या नाटक का सूत्रपात लक्ष्मीनारायण मिश्र जी द्वारा हुआ । उनके समस्या नाटक हिंदी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं । उनके समस्या नाटकों का हम क्रमश: विवेचन करेंगे ---

अ) संन्यासी --

प्रस्तुत नाटक का केन्द्र है एक कॉलेज, जिसमें सहशिक्षा की व्यवस्था है । इसमें रमाशंकर प्रोफेसर, नयी उम्र का है और लडकियों में विशेष रुचि रखता है । कॉलेज का छात्र विश्वकांत अपनी सहपाठिनी मालती से प्यार करता है, यही रमाशंकर के लिए ईर्ष्या का विषय है । उसकी ईर्ष्याभावना विश्वकांत को स्थिरता नहीं प्रदान करता बल्कि अपनी ईर्ष्याभावना को वह हीनता से विश्वकांत को तकलीफ देता रहता है ।

' पूर्वीय संसार ' नामक पत्र के संपादक है - मुरलीधर, जिनकी विश्वकांत पर विशेष कृपा रहती है । पत्र संपादन कार्य में विश्वकांत भी उनकी सहायता करता है । विश्वनाथ बड़े जीवट का आदमी है, ' दूरदर्शी मनस्वी ' है । मुरलीधर विश्वकांत को देश के महायज्ञ का पुरोहित बनाना चाहता है और इसीलिए चाहता है, कि वह विवाह-बंधन में न बंधे और सर्वथा निर्द्वन्द्व होकर देश - माँ की सेवा करे । रमाकांत विश्वकांत को विश्वविद्यालय से निष्कासन करता है और विश्वकांत आशियाई - संघ के संगठनकार्य में लग जाता है ।

गोरी जातियों की वर्ण संबंधी उच्चता की समस्या इस नाटक की मुख्य समस्या है । ' संन्यासी ' में विश्वकांत, मालती और रमाशंकर की कथा के साथ साथ दीनानाथ, विश्वनाथ, मुरलीधर की भी है । मालती और विश्वकांत एकदूसरे से प्यार करके भी विवाहसम्बन्ध में नहीं बंध पाते । रमाकांत शुक्ल अपनी बेटी मालती की स्वच्छंदता से चीढ़कर कहते हैं कि ' विश्वकांत से कभी न मिलना ' त्याग में ही जीवन है - जो त्याग नहीं कर सकता उसे जीने का अधिकार नहीं । '[1] विश्वकांत की

---

[1] लक्ष्मीनारायण मिश्र - संन्यासी - पृ. ३६ ।

अनुरागिनी मालती की समस्या इस प्रकार यह है कि वह विश्वकांत की पत्नी नहीं हो सकती । मिश्र जी शारीरिकता को ज्यादा महत्व नहीं देते । मालती के द्वारा उन्होंने कहलाया है, कि विश्वकांत के साथ जो उसका सम्बन्ध है, वह आत्मिक है, शारीरिक नहीं । वह विश्वकांत से आग्रह करती है, कि वह आत्मा के सुख के लिए शरीर का सुख छोड दें । विश्वकांत के लिए उस ऊँचाई तक पहुँचना कठिन है, इस लिए कि वह निर्बल मनुष्य है । नाटककारने प्रेम और विवाह की अलग अलग स्थितियाँ इसी अर्थ में स्थिर की है । मालती विश्वकांत की प्रेमिका हो कर जिंदगी गुजार सकती है, लेकिन वहीं वह हिंदू-नारी है, जिसके अपने आदर्श है । समाज की भलाई के आगे व्यक्ति के प्रश्न का कोई मोल नहीं हो सकता । विश्वकांत ने इस सिलसिले में एक पते की बात कही है कि इस मानी में हम लोग पूरे सोशलिस्ट है ।‘[1] मालती इसी परिप्रेक्ष्य में कहती है ‘ मैं रोमांटिक प्रेम नहीं चाहती - विश्वकांत के साथ मेरा यही था । मैं वह प्रेम चाहती हूँ, जो आजकल की दुनिया में समझदारी के साथ निबाहा जा सके ।‘[2] मालती अनुभव करती है कि विश्वकांत प्रेम करने की चीज है, प्रेम करने की नहीं ।‘[3] मालती विवाह को एक प्राकृतिक आवश्यकता समझती है । उसके अनुसार प्रेम का आधार वासना, जवानी के उपभोग की इच्छा नहीं होना चाहिए । संसार में जन्म लेना, खाना-पीना और मर जाना यही जीवन नहीं है । जीवन तो वह चीज है, जिसकी गति आँधी, तूफान, प्रेम, शोक, सुख, दुःख मरण किसी के रोके न रुके । विश्वकांत के लिए वह प्रेरक सिध्द होती है । वह कहती है ‘ मेरे लिए दुनिया न छोडो ... यह कोई ऊँचा आदर्श नहीं होगा । अपनी रक्षा करो । तुम्हारी यह यात्रा दूसरों को प्रोत्साहित करें और आगे बढने के लिए ।‘[4] मालती का यह समाधान अति-बौध्दिक है । शारीरिक और मानसिक प्रेम के बीच अलगाव करना सहज नहीं है । उनकी समस्या और समाधान दोनों ही बौध्दिक है । उनका इस विषय में कहना है कि, ‘ संसार की समस्याएँ, जिनके लिए आजकल इतना शोर मचा

---

१ लक्ष्मीनारायण मिश्र - संन्यासी - पृ.१४४ ।

२ - वही - ,, पृ.१६६ ।

३ - वही - ,, पृ.१६७ ।

४ - वही - ,, पृ.१८१ ।

है, तराजू के पलडेपर नहीं सुलझायी जा सकी ... वे पैदा हुई बुध्दि से और उनका उत्तर भी बुध्दि से ही मिलेगा ।"

अनमेल विवाह की प्रथा और उसके अनाचार की मारी हुई किशोरियों का दाम्पत्य जीवन स्वभावत: विषाक्त है । अनमेल चीजों का मिलना अस्वाभाविक होता है । नाटककार कहना चाहते हैं कि यदि कोई वृध्द पुरुष विवाह करना ही चाहता है, तो उसे प्रौढा विधवा से विवाह करना चाहिए , न कि किसी कुमारिका से ।

इस में और एक बात है, कि शिक्षालयों का नियमन नाटककार के मतानुसार 'मार्शल लॉ' से नहीं हो सकता । 'स्पिरिच्युअल' अथवा 'कल्चरल लॉ' से ही होना चाहिए ।

मिश्र जी सह शिक्षा के पक्ष में नहीं हैं । मानसिक व्यभिचार शारीरिक व्यभिचार से भी अधिक भयंकर है ।"[1] इसमें 'मोती' की समस्या भी है । उसकी यह समस्या अनेक लोगों की समस्या है । देश को आगे चलकर इस विषय में कानून बनाना ही पडा । नाटककार को अंग्रेजी शिक्षा, उनकी संगति का परिणाम भारतीयों के लिए शुभ नहीं लगता ।

ब) <u>राक्षस का मंदिर --</u>

इस नाटक में मिश्र जी ने मनुष्य की जिंदगी को सब ओर से भीतर और बाहर प्रवृत्तियों के चढाव और उतार को दैवी और राक्षसी द्वन्द्व को आशा और निराशा के सम्मिलन को देखने, परखने की चेष्टा की है । इसमें रामलाल, अश्करी, मुनीश्वर ऐसे ही चरित्र हैं, जिनके जीवन के उपकरणों का विश्लेषण यथार्थ के धरातलपर किया गया है । मनुष्य की जिंदगी की सच्चाई को छिपा लेने के लिए सभ्यता, शिक्षा, नियम, कानून के जो एक के ऊपर दूसरे पर्दे हुए हैं, नाटककार ने उन्हें हटाया है ।

---

१ लक्ष्मीनारायण मिश्र - संन्यासी - पृ.८२ ।

रामलाल ढलती उम्र के वकील है, जिनकी जिंदगी के दो हिस्से हैं - एक है - उनकी वेश्या अश्करी, जिसे उन्होंने छोटी-सी उम्र में पैसे और आराम का प्रलोभन देकर घर रखा था। दूसरा हिस्सा है - शैम्पेन। बूढ़े रामलाल ने वेश्या अपनी संतुष्टि के लिए नहीं रखी है। वह मिस्टर बैनर्जी से कहता है --`वह संतुष्ट कैसे ... गैरमुमकीन है। मुझ में प्रेम करने की शक्ति नहीं ... उसे आवश्यकता है ... यौवन की।`[1] अश्करी का अतृप्त यौनभाव भयंकर रोग बनकर उसे ग्रसित करता है। रामलाल जानता है, कि अश्करी वह जलती हुई आग है, जिसके संसर्ग में जो, भी आयेगा, जल जायेगा, और इसीलिए जब वह मुनीश्वर और अश्करी को आलिंगनबध्द देखता है तो मुनीश्वर से सरोष कहता है `यही तुम्हारा दर्शन है मूर्ख। फिर भी उसे क्षमा करता है। मुनीश्वर उसे समझा देता है कि अश्करी का खाने और कपडे से ही काम नहीं चलता।[2]

अश्करी के अमुक्त काम की समस्या नाटक की प्रमुख समस्या है। मिश्र जी बताते हैं, कि अश्करी अपनी छोटी उम्र में ही रामलाल के घरपर ऐशोआराम और पैसों के प्रलोभन के कारण आयी थी लेकिन वह अतृप्त है। पहले वह अपनी गरीबी के कारण पहले वेश्या बनी होगी। परंतु अवस्था प्राप्त होने के बाद उसकी भूख का रूप बदलता है। काम का सम्बन्ध केवल तन की भूख से नहीं मिलता और उसके ऊपर मन की भीख है, उसके तृप्त होने का साधन नहीं मिलता। जिससे उसका काम-भाव हाहाकार करता है।

इसके साथ ही शिक्षा-व्यवस्था की भयंकर त्रुटि की ओर संकेत किया है। विशिष्टिकरण के इस युग में यह सहज ही सिध्द है कि उच्च से उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्ति की शिक्षा भी अधूरी, अपूर्ण और वायव्य हो।`[3] नाटककार का मत है कि, जहाँ मनुष्य प्रवृत्तियों और मानसिक दुर्बलताओं का गुलाम न होकर अपना राजा बन बैठता है और जहाँ उसके जीवन का सत्य ब्रहमांड के सामंजस्य में मिलकर एक हो जाता है वहीं सम्पूर्ण कला का अंत होता है।`[4]

---

१ लक्ष्मीनारायण मिश्र - राक्षस का मंदिर - पृ.२४।

२ - वही - ,, पृ.४०।

3 डॉ. विनयकुमार - हिंदी के समस्या नाटक - लक्ष्मीनारायण मिश्र - पृ.१६२।

४ लक्ष्मीनारायण मिश्र - राक्षस का मंदिर - मेरा दृष्टिकोण - पृ.3।

क)　　मुक्ति का रहस्य --

डिप्टी कलक्टर उमाशंकर शर्मा गांधी जी के प्रभाव से अपने पद से इस्तीफा देकर दो साल की सजा पाता है । इस सजा के दिनों में उसके कोई सगे - सम्बन्धि उसकी उपेक्षा करते हैं । जेलयात्रा के आते ही उमाशंकर की पत्नी जो तपेदिक की बीमार है, इलाज नहीं करा सकता और ऊपर से उमाशंकर का स्वाभिमान किसी के आगे झुकना नहीं जानता । पत्नी की मृत्यु होने के बाद बेसहारा उमाशंकर को आशादेवी नामक विदुषी सहारा देती है । उमाशंकर के विपत्ति के समय आशादेवी ने बहुत कुछ किया है । आशादेवी उससे प्रेम करती है, जो समाज को स्वीकार नहीं है + समाज की मान्यताओं के अनुसार आशादेवी को उमाशंकर के साथ रहने का कोई अधिकार नहीं है । हमेशा से ही अंधविश्वासों एवं रूढियों को तोडकर आगे बढनेवाली नारी देश में संदेह का शिकार बनती आ रही है । समाज को यह स्वीकार नहीं है कि व्यक्ति को यह सुविधा दी जाय कि वह अपना विकास निजी अनुभवों के बलपर करें । वह यह मान नहीं सकता कि सब के लिए विकास का रास्ता अलग हो सकता है । इसलिए आशादेवी को अपने जीवन पथ का निर्माण करने की स्वतंत्रता नहीं है । परंतु रमाकांत हर व्यक्ति को, हर बात को व्यक्ति की आँख से देखता है, इसलिए वह इस विषय में पूर्ण आश्वस्त है कि आशादेवी को उसके साथ रहने का अबाध अधिकार है ।

आशादेवी का अमुक्त काम उमाशंकर की प्राप्ति के लिए वह तडप उठता है और वह जघन्य कर्म करती है । उमाशंकर की पत्नी के जीवित रहते उसके प्रेम के लिए कोई गुंजाईश नहीं इसलिए वह डॉ. त्रिभुवननाथ के यहाँ से जहर लाकर पत्नी को जहर पिलाकर इस साझीदार की बाधा का अंत कर देती है । इधर डॉ. त्रिभुवननाथ जो उसकी भूल का अनुचित लाभ उठाने के लिए बेचैन है । यह डॉक्टर इस पीढी के उन विकृत मस्तिष्क युवकों का प्रतिनिधि है, जो प्रवृत्तियों के गुलाम है - संस्कार, चरित्रबल या ऐसी सभी बातों को, जो मनुष्य को पशुत्व के ऊपर उठाये रहती है, तिलांजली देकर पतन की चरमदशा को प्राप्त है । परंतु आशा को पुलिस अथवा न्यायाधिकरण की कोई परवाह नहीं है, उसे दंड का भी भय नहीं है । वह तो अपने जघन्य कर्म के

लिए उमाशंकर के सामने जाने को कतराती है । परंतु ईमानदार आशादेवी अपना अपराध उसके सामने प्रकट करती है साथ ही डॉ. त्रिभुवननाथ के साथ जो उसके पाप का साक्षी है, उसका साक्षीदार होना चाहती है ।

इस प्रकार आशादेवी उस पुरुष को जो उसके लिए प्रथम पुरुष था, अपना पति बनाकर अपने इस जीवन के अर्थ अंतिम पुरुष भी बना लेती है और इस रूप में उसकी समस्या का समाधान होता है । मिश्र जी ने इस समाधान को प्रस्तुत करके यह निर्धारित किया है कि नारी को उसी पुरुष की हो कर रहना चाहिए, जो चाहे जिस परिस्थिति में, उसके जीवन में आ जाता है और उसके शरीरपर अधिकार कर लेता है । मिश्र जी पश्चिम के मुक्तभोगी आदर्श को स्वीकार नहीं करते । शरीर कोई सौदे की वस्तु नहीं है, जो एक के बाद दूसरे ग्राहकों के हाथों सौंपी जाय । इसके इस समाधान में उसकी समस्या का समाधान है, साथ ही उसमें डॉक्टर को मनुष्यत्व प्रदान करने की शक्ति है और यही उमाशंकर की मुक्ति का रहस्य भी है ।

इसमें और एक समस्या है - पट्टीदारी की, उमाशंकर को दुनियादारी नहीं आती । लेकिन पैतृक सम्पति के इस स्वत्वविसर्जन के लिए उसका आदर्श भी प्रेरणारूप है ।

ड) आधी रात -

`आधी रात` में प्रकाशचंद नामक एक भावुक कवि जिसको शब्दों और भावों की आँधी पैदा कर लेने की शक्ति प्राप्त है ।`[1] वह अपनी अपढ, गँवार, अनपढ, कुरूप स्त्री का त्यागकर मायावती नामक सुसंस्कृत विदुषी के साथ शादी करके रहता है ।

प्रकाशचंद्र का दोस्त राघवशरण के अनुसार मायावती `प्रकाश` की `समस्या` है, उसका बंधन है ।`[2] वह चाहता है कि प्रकाश व्यक्ति की इस व्यष्टि से ऊपर उठकर अपनी सत्ता से ऊपर उठकर अपने को विश्व में लय कर दें ।`[3]

---

१ लक्ष्मीनारायण मिश्र - आधी रात - पृ.२५ ।

२ - वही - ,, पृ.१८ ।

३ - वही - ,, पृ.१६ ।

मायावती का अतीत अच्छा नहीं है । वह विलायती शिक्षा पा चुकी है । योरोप के नारी - सुधार आंदोलन के साथ वह जुडी थी । उसके अनुसार भारतीय दाम्पत्य जीवन गुलामी और मूर्खता का परिचायक है । परंतु वह इस सत्य को समझ रही है कि योरोप के जागरित नारी समाज के स्वतंत्रता के नामपर दंभ और आत्मवंचना को ही प्रश्रय दिया है और उसने आजाद होकर वासना की ही अभिवृप्ति की है । वैसे नारियों की स्वतंत्रता की माँग का अर्थ था, मुक्त भोग के लिए अधिकार प्राप्ति और उनके कौमार्य का ब्रह्मचर्य नहीं - व्यभिचार । [1] वह समझने लगी है, कि सामाजिक मर्यादा और विधान तोडने की चीजें नहीं हैं । व्यक्तित्व का विकास उनके भीतर से ही होना चाहिए । पछतावे से कुछ नहीं हासिल होता । पछतावा पाप को धो डालता है, यह ईसाईयों की मान्यता है, हिंदुओं की नहीं ।

परिचय के भोगवाद के प्रति प्रतिक्रियात्मक विद्रोह भाव ने मायावती को आध्यात्मिक प्रयोग की ओर उन्मुख किया है ।

मिश्र जी के ऊपर पश्चिम के नवीन यथातथ्यवाद का प्रभाव है । और अति-यथार्थवादी बुध्दिवाद का प्रभाव पडा है । परंतु उनका बुध्दिवाद पश्चिम से उधार लिया हुआ नहीं है । मायावती प्रेतात्मा की सत्ता में विश्वास करती है ।

इसके अलावा इसमें वैज्ञानिक युग की बडी देन है । घडी को जीवन की स्वाभाविकता को बिगाडनेवाली शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया है । घडी इस मशीनीयुग की जड यांत्रिकता का प्रमाण है । मायावती आधुनिक युग से विद्रोह कर भारतीय पुराचीनता को अंगीकार करते हुए भारतीय आदर्शों की उच्चता का जय-घोष करती है ।

ई) राजयोग --

इसमें पुरुष और नारी के जीवन की समस्या अपनी सारी प्रचंडता के साथ इसमें उभारकर आयी है । नाटककार शत्रुसूदन नरेंद्र और चम्पा के प्रेम की समस्या की तह में जाकर उसके कारण का अनुसंधान करना चाहते हैं । हमारे देश के वैवाहिक

---

१ लक्ष्मीनारायण मिश्र - आधी रात - पृ.४४ ।

जीवन में आज जो अशांति है, कुंठा है वह पहले कभी इस रूप में भयानक नहीं बनी थी । मिश्र जी मानते हैं, कि यह समस्या आधुनिक शिक्षा के प्रचलन और पाश्चात्य विचारों के ग्रहण के बाद इस रूप में बढ़कर खड़ी हुई ।

पापी और पाप के विषय में नाटककार का कहना है, कि पापी एक पाप को छिपाने के लिए ही दूसरा पाप कर जाता है । गजराज ठाकुर बिहारीसिंह की धर्मपत्नी के साथ अवैध यौन-सम्बन्ध स्थिर करके जो पाप किया था, उसका १४ बरसों से वह प्रायश्चित करता रहा है - भय और संदेह पश्चाताप और प्रायश्चित की आग में धीरे धीरे सुलगता हुआ । इस पाप के प्रकाशित होने के बाद उसका बोझा हल्का हो गया और उसका प्रायश्चित पूरा हो गया । मनुष्य के न्यायाधिकरण में गजराज के पाप का भी दंड है, उसे ग्रहण करने में क्या कठिनाई है, जो किसी दूसरे तरीके की जायें । मिश्र जी बताते हैं मनुष्य की अदालत जिसे दंड देती है उसे सदैव के लिए अपराधी बना देती है । न्याय तो वास्तव में होता है - मनुष्य के हृदय में और विचारक का काम करती है - स्वतः उसकी आत्मा । यही दंडविधान अधिक उपयोगी है । उसे ग्रहण करनेवाला ही पाप - मुक्त होता है ।

इसमें नाटककार ने साहित्य और कला के विषय में सोचते हुए कहते हैं कि जो साहित्य जीवन से संत्रस्त होकर किसी कल्पना लोक में बसता हो, उसने धर्म की समाज धर्म की माँग पूरी नहीं होती ।

इ) <u>सिन्दूर की होली ---</u>

मिश्र जी का यह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण एवं प्रसिद्ध समस्या नाटक है । प्रधान पात्र डिप्टी कलक्टर मुरारीलाल हैं, जो दस बरस पहले लोभ की दुर्बलता में अपने मुंशी माहिरअली की सहायता से, अपने एक मित्र को मारकर अमीर बना था । इस पाप का प्रायश्चित वह अपने स्वर्गीय मित्र के पुत्र मनोजशंकर को हरतरहसे संतुष्ट रखकर करता रहा है । दुनिया के सामने उसका यह पाप अप्रकट है । मुंशी माहिरअली

स्वामिभक्ति और कुछ दंड के भय से चुप्प हैं । मुरारीलाल ने यह जाहीर किया कि मनोज के पिताजी ने आत्महत्या की थी और मरने के बाद मनोज को मुरारीलाल की गोद में डाल दिया था । पिछले दसवर्षों से वह अपने पाप की ज्वाला में जलता रहा है । एक पाप को छिपाने के लिए झूठ का कितना सहारा लेना पडा है मुरारीलाल को ।

' सिंदूर की होली ' में विधवा विवाह और प्रथम दर्शन में ही उत्पन्न प्रेम से प्रेरित विवाह की समस्याओं को प्रस्तुत किया है - हल स्वयं न देकर पाठकों दर्शकों के विवेक पर छोड दिया है । समस्याओं के प्रत्येक पहलू को इसमें चिंतन तर्क-वितर्क सहित प्रस्तुत किया गया है । मनोरमा वैधव्य को ही आदर्श मानकर पुनर्विवाह के पक्ष में नही है । युवावस्था में समाज में पुरुषा की कुदृष्टि से अपने वैधव्य को सुरक्षित रखने में वह असमर्थ है । जीवननिर्वाह के लिए वह कला को आधार बनाती है लेकिन अंत में ऋषिकेश जाकर माला लेने का विचार करती है । मनोरमा विधवा विवाह को नारी स्वभाव के विरुध्द समझाती है । विधवा विचार को मानने का अर्थ है कि प्रेम का सम्बन्ध मन से नहीं, शारीरिक तृप्ति से है । अत: उससे प्रेम की एक रुपता भंग होगी, संदेह उत्पन्न होगा, तलाक जैसे दोषा उत्पन्न होगें ।

मनोरमा, जहाँ साधना, त्याग, तपस्या को विधवा का आदर्श मानती है, वहाँ चंद्रकला सामाजिक मर्यादाओं की अवहेलना करके अपनी मनस्तुष्टि और अनुभूति को प्रथम महत्व देती है । मनोरमा बुध्दिजीवि है तो चंद्रकला भावुक और रोमांटिक । चंद्रकला कहती है -' तुम्हारी मजबूरी पहले सामाजिक और मानसिक हुई , मेरी मजबूरी प्रारंभ में ही मानसिक हो गयी । इसप्रकार से विरोधी आदर्शों के होनेपर नाटक की समस्या के विवेचन में अधिक गहनता आयी है । मूल समस्या के साथ साथ बुध्दिवाद के सिध्दान्त का प्रतिपादन भी नाटककार का मुख्य लक्ष्य है । गौण रुप में रिश्वत और कानून द्वारा सुरक्षा की समस्या, रोगोपचार की समस्या, विधवा में जीवन-निर्वाह की समस्या व्यंजित है ।

मिश्र जी ने मुख्यत: अपने नाटकों में ' चिरंतन नारीत्व ' को लिया है ।

भावुकता को छोडकर अपनी स्थिति के सम्बन्ध में स्वयं चिंतन करनेवाली, परिणाम सोचकर स्वयं निर्णय लेने की चेतना उनके नारीपात्रों में मिलती है । मिश्र जी ने समस्याओं का समाधान बुध्दि के द्वारा ही देना चाहा है क्योंकि उनकी मान्यता है कि ' वे पैदा हुई हैं बुध्दि से और उनका उत्तर भी बुध्दि से ही मिलेगा । '

सेठ गोविंददास --

सेठ गोविंददास जी समाज सुधारक, राजनीतिक कार्यकर्ता, सांस्कृतिक चेतना के पूर्ण चिंतक, भारतीयता, राष्ट्रीयता, गांधीवाद के समर्थक हैं । उनके समस्या नाटक ---

अ) प्रकाश -

नाटक की रचना २५ जून सन १९३० को दमोह जेल में प्रारंभ की । इसमें उन्होंने सामाजिक जीवन के विविध प्रश्नों के साथ ही कुछ ही राजनैतिक, साम्प्रदायिक प्रश्नों को उठाया है । इसे अंग्रेजी में ' सोशियोपोलिटिकल ड्रामा ' कहा गया है । ' प्रकाश ' नाटक वर्तमान राजनीतिक, सामाजिक, नैतिक जीवन का एक चीखता - चिल्लाता यथार्थवादी चित्र है । प्रकाश का मुख्य कथानक राजा अजयसिंह और प्रकाश से सम्बध्द है । राजा अभयसिंह देश के उस वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है जो जमींदार कहलाता है और अपनी वंश-प्रतिष्ठा की आन-बान निबाहने में बर्बाद होता चला जा रहा है । वह अपने यहाँ दावत का आयोजन करता है, जिसमें सत्यवादी, गांधीवादी प्रकाशचंद उसके व्यवहार पर आपत्ति करता है । परंतु राजा अभयसिंह [illegible] पर कोई आरोप नहीं लगाता । प्रकाश एक ऐसा समाज चाहता है, जिस में गरीबी और अमीरी का भेदभाव न हो ।

नगर में आमसभा के समय दामोदरदास गुप्त राजा अभयसिंह पर दबाव डाल प्रकाश के विरुध्द मुकदमा चलाता है तब भी प्रकाश बचता है । उसके बाद प्रकाश को राजासाहब की जमींदारी में बलवा करने के आरोप में पुलिस पकडती है तब प्रकाश को माँ तारा जो अभयसिंह की पत्नी इंदु है, प्रकट हो रहस्य बताती है । लेकिन प्रकाश को अब बचाना मुश्किल होता है ।

नाटककार ने प्रस्ताव किया है कि सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिए उनके विरुध्द जनमत तैय्यार करना उचित होगा । कानून बनाकर सामाजिक कुरीतियों का उन्मूलन करने का प्रयास सदा बेकार जाता है । नाटक में समस्याओं की भीड़ है, अत: समस्या की प्रस्तुति ठीक तरह से नहीं हो पायी है ।

ब) सिध्दान्त-स्वातंत्र्य --

इसकी रचना तीसरी जेलयात्रा के समय नागपुर जेल में की । सेठजी ने बताया है कि गांधीजी के आंदोलन की लहर ऊँची दीवारों को लाँघकर राजाओं, सेठों के घर में भी अठखेलियाँ करने लगी थी । लाला चतुर्भुज एक धनाढ्य व्यक्ति है, जिसने बडी मेहनत से अपनी सम्पत्ति खड़ी की है । उसका पुत्र त्रिभुवन बी.ए. पास है और नयी दुनिया के विचारों से प्रभावित है । अरविंद के संपर्क में आकर वह आतंकवादी हो अंग्रेजों का विरोधी हो गया है । वह उनकी तिजारत को नष्ट करने के लिए विदेशी कपडों के बहिष्कार भी करता है । परंतु समय बीतनेपर त्रिभुवन का जोश खत्म हुआ और वह पूरा का पूरा अंग्रेज परस्त हो गया । `सर` की उपाधि से सम्मानित मुक्त प्रांत की गृहमंत्री के पद से सुशोभित है। सर त्रिभुवन का इकलौता बेटा मनोहर घर से बागी बनकर निकला है । वह चाहता है, कि उसके दादा और पिता अंग्रेजों को प्राप्त उपाधियाँ लौटा दें । जमींदारी का हक छोड दें, जमीन मेहनतवाले किसानों को दे । त्रिभुवन मानता है, कि ये मनोहर की जवानी का जोश है, अपने आप ठंडा हो जायेगा । लेकिन उसका यह सोचना गलत साबित होता है, मनोहर पुलिस की गोली का शिकार होता है । लालाजी उसकी मृत्यु से द्रवित हो, ये निश्चय करते है, कि वे अब वैसा ही करेंगे, जैसा मनोहर चाहता है । मनोहर की मृत्यु से जिलाधीश विश्वेश्वरदायल की भी आँखे खुल जाती है और वह अनुभव करता है कि अपने देशवासियों, मनुष्यता की दृष्टि से नि:शस्त्रों को सजा दिलवाकर पंद्रह सौ माहवार पाने की अपेक्षा १५ रु.महीनेपर गुजर कर लेना कहीं अच्छा है । और अपनी नौकरी से इस्तीफा देता है । सर त्रिभुवन भावुकता के वशीभूत, कुछ करना गलत समझ, बडे बौंडे ढंग से कहता है कि सारे विषयपर सिध्दान्त - स्वातंत्र्य की दृष्टि से विचार करना होगा ।

इसमें हिंसा, अहिंसा, आतंकवाद और सविनय अवज्ञा के द्वन्द्व को प्रस्तुत करके बताया है, कि जहाँ हिंसा पराजित होती है वहीं अहिंसा विजयिनी, जहाँ आतंकवाद असफल होता है, वहाँ गांधीवाद सफल। सेठजी मानते हैं, कि आतंकवादी आंदोलन से राष्ट्र की स्वातंत्र्य लडाई में सफलता नहीं पायी जा सकती। सफलता अहिंसामूलक असहयोग आंदोलन से ही प्राप्त होगी।

क) सेवा-पथ --

प्रांतीय क्षेत्र में शासन के सन १९३५ के नये संविधान के लागू होने के कारण कांग्रेस के आगे पदग्रहण का प्रश्न खडा हुआ। कांग्रेस के नेताओं ने पदग्रहण स्वीकार किया। सेठजी के मन में कांग्रेस के पदग्रहण विषयक निर्णय का औचित्य स्पष्ट नहीं हुआ।

कॉलेज जीवन के साथी, परस्पर मित्र श्री निवास शक्तिपाल, दीनानाथ तीनों राष्ट्र की सेवा करना चाहते हैं। सेठजी के मन में यह प्रश्न है कि सेवा का पथ कौन-सा प्रशस्त है।

ऊँचे आदर्शों के नारे अथवा विशुध्द सेवा का आदर्श दलगत राजनीति में सदा सहायक सिध्द नहीं होते। दीनानाथ के प्रमाणपर सेठजी ने बताया है कि देशसेवा के लिए मुहूर्त खोजने की जरूरत नहीं है और न सुविधाओं की अनुकूलता ही अनिवार्य है। नाटक में गांधीजी द्वारा निर्धारित रचनात्मक कार्यक्रम को सेवा के प्रशस्त पथ के रूप में स्वीकार किया है।

ड) बडा पापी कौन ?

इसमें सेठजी ने त्रिलोकनाथ और रमाकांत नामक दो व्यक्तियों को प्रस्तुत कर इस बात का विचार किया है कि इन दोनों पापियों में किसका पलडा भारी पडता है ?

त्रिलोकीनाथ प्रतिष्ठित जमींदार है। उसमें हजार ऐब हो सकते हैं कि परंतु ये बडी बात यह है कि वह फरेब नहीं जानता, फरेब नहीं कर सकता। रमाकांत जिस नवोदित पूँजीपति वर्ग का है, उसकी एक बडी दुर्विशेषता उसकी असहिष्णुता

है । वह अकुलीन के साथ साथ आवारा और आचरणहीन है । रमाकांत का दोहरा व्यक्तित्व है, उसकी कथनी और करनी में कहीं सामंजस्य नहीं है । इस नाटक की समस्या नाटकीय कथानक के भीतर से उभरकर खड़ी नहीं हो पाती । इसमें संघर्ष का आवाज है ।

इ) <u>हिंसा या अहिंसा --</u>

इसमें मिल मालिक और मजदूरों के संघर्ष की समस्या है । देश में उद्योगधन्धों के विकास के साथ साथ मजदूर-सभाओं का भी जोर बढ़ा है । पूंजीपतियों और मजदूरों के स्वार्थ परस्पर टकराने लगे हैं । नाटक का केन्द्रबिंदु है - माधवदास - हमेशा मजदूरों के मेहनत को बराबर प्रतिष्ठा देता है। वह स्वीकारता है कि पूंजी और श्रम के बीच मुनाफे का उचित अनुपात में विभाजन होना चाहिए ।

दुर्गादास पहली पत्नी की संतान होते हुए अपनी विमाता के कुसंस्कार में ढला हुआ था । मजदूर संगठन की प्रतिक्रिया उसकी तीखी है । सौदामिनी की बहन अलकनंदा और दुर्गादास दोनों विवाह बंधन में बंधन चाहते हैं । अलकनंदा को मजदूरों के प्रति पूर्ण सहानुभूति है । मजदूर नेता त्रिलोचन पाल और अलकनंदा को मालिक का अंतिम उत्तर सुनने के लिए एकत्र देख क्रोधित होता है । वह त्रिलोचन को मारता है, स्वयं मरता है । माधवदास पुत्रशोक में पागल हो मर जाता है । अकेली अलकनंदा और हतप्रभ सौदामिनी रह जाती है । समस्या का समाधान गांधीवादी आदर्श के अनुरूप हुआ है ।

ऊ) <u>गरीबी या अमीरी अथवा श्रम या उत्तराधिकार --</u>

सेठजी ने गरीबी,अमीरी,श्रम या उतराधिकार के प्रश्न को लेकर इस नाटक की समस्या का आलजाल खड़ा कर अंत में यह निर्धारित किया है कि श्रम से उपार्जित सम्पति से ही सच्चे सुख की प्राप्ति होती है । उतराधिकार से जिस सम्पति की प्राप्ति होती है, उससे मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास का सच्चा मार्ग कभी प्रशस्त नहीं हो सकता ।

विद्याभूषण का बेटा सरस्वतीचंद्र बड़ा बनकर कुशल चित्रकार तथा

साहित्यकार बना और उसे अपने पिता की अधूरी नाट्यकृति को पूरा किया । अंत में नाटककार ने यह आस्था जगायी है, कि इस संसार में साहित्यकार की जीविका ले कर जिया जा सकता है । नाटक की मुख्य समस्या का समाधान नाटककार ने गांधीवादी आदर्शों के अनुरूप किया है ।

ठ) संतोष कहाँ ?

इसमें श्री मन्मथनाथ गुप्त ने नाटक की आलोचना करते हुए लिखा है कि इस नाटक से कुछ इस किस्म की प्रतिध्वनि निकलती है कि साधारण गृहस्थ ही यदि उसमें अच्छे विचार और सेवा भाव है, तो सबसे अधिक संतोष प्राप्त कर सकता है ।`[१] मनसाराम संतोष की खोज में अतृप्त होकर एक पद में दूसरे पद तक यहाँ वहाँ भटकता रहता है । अंत में किसान बननेपर उसे मनशांति मिलती है । इस प्रकार सेठजी ने मनसाराम के असंतोष की समस्या का समाधान महात्मा गांधीद्वारा रचनात्मक कार्यक्रम में लग जानेपर होता है । इसमें कांग्रेसी नेताओं की समस्याओं का कोई समाधान नहीं है ।

सुख किसमें ?

इसमें जीवन का सुख ग्रहण में है या अर्पण में ? इस बात पर विचार किया गया है । नाटक का नायक सृष्टिनाथ प्रकृति की सारी विभूतियोंपर सृष्टि की सारी सम्पन्नतापर, एकाधिकार करके सुख भोगना चाहता है । परंतु इन वैज्ञानिक सुखों का विपरित परिणाम होता है । अपनी पराजय के कारण वह हरबार आत्मघात करने जाता है, परंतु हरबाद कोई भी कारण उसे और इंद्रिय निग्रह नहीं करने देता । अंत में उसी का बेटा मोहनमाला के वात्सल्य में ही उसे जीवन का सच्चा सुख प्राप्त होता है । इस प्रकार नाटककारने सिध्द किया है कि सच्चा सुख ग्रहण में न होकर समर्पण में है । पुरुष के पौरुष की `अहंमन्यता` जिओ और जीने दो` के उच्च आदर्श के ग्रहण करने में सदा बाधक रहती है । आदमी प्रकृति की विभूतियों पर एकाधिकार करना चाहता है और अपनी इसी वासना के कारण वह दुःख भोगता है । दार्शनिक,

---

१ डॉ.नगेंद्र - सेठ गोविंददास अभिनंदन ग्रंथ - पृ०

मनोवैज्ञानिक समस्या का समाधान वैष्णवता को सम्बल बनाया है ।

महत्व किसे ?

इस नाटक में कर्मचंद जैसे धनीमानी कांग्रेस कार्यकर्ता की कहानी है । जो कांग्रेस की नीति, कार्यकर्ताओं के प्रति निष्ठावान हैं । वह विदेशी वस्तुओं को छूना भी पाप समझता है । कर्मचंद ऐसा अहिंसक है, वह किसी का दिल दुखाना नहीं चाहता । वह एक ईमानदार सेवक है, उसे यश की स्पृहा तक नहीं है । कर्मचंद को संसदीय कार्यक्रम में अविश्वास है । वह कांग्रेस की शक्ति है । धन की शक्ति के आगे पृथ्वीनाथ, देशव्रत जैसे कांग्रेस प्रणत होते हैं लेकिन वहीं कर्मचंद है, जो धन को धूल से अधिक नहीं मानता । कर्मचंद लोकोपवाद सहता है, उसे बहुत तकलीफ दी जाती है, परंतु शुध्दाचरण, त्याग का सम्बल लेकर चलने वाले किसी कर्मचंद को स्पर्श करने की शक्ति भी इन क्षुद्र पुतलों में नहीं हो सकती । समस्या की प्रस्तुति ठीक नहीं हो सकी फिर भी यह हमें सोचने का अवसर देता है ।

दुख क्यों ?

इसका नायक यशपाल ईर्ष्यान्ध होकर अपने उपकारक ब्रह्मदत्त के पराभव का कारण बनता है । ईर्ष्या उसे इतना नीचे गिरा देती है कि असहयोगी होनेपर भी वह एक क्रांतिकारी को पुलिस के हवाले कर अपने मंत्रद्रष्टा गरीबदास को झूठे इलजाम पर जेल की सजा दिलाता है । उसकी साध्वी पत्नी सुखदा उसे समझाती है कि आदमी को सच्चा सुख मिलता है, अंतःकरण की निष्कलंकता, चरित्र की शुध्दता से । सुखदा जब पति की चरित्र-हीनता को और सह नहीं पाती तब उसका भंडा फोड करती है और यशपाल की सुखशांति नष्ट हो जाती है । इस नाटक में ईर्ष्या की बुराईयों का अच्छा दिग्दर्शन तो कराया गया है, पर समस्या की प्रस्तुति वह नहीं कर पाये ।

प्रेम या पाप --

इस में सेठजी ने वासना की आँधी में इतस्तत: डोलनेवाली कीर्ति की कथा कही है । कीर्ति शेयर बाजार के धनकुबेर लक्ष्मीनिवास की पत्नी है । पति को ,

कारोबार के फंसे होने के कारण इतनी फुर्सत नहीं है कि वह पत्नी की कोमल भावनाओं को सहलाये और इधर पत्नी का रूप गर्व यह चाहता है कि उसके सामने ऐसा कोई हो, जो उसके रूप की प्रशंसा में महाकाव्य रच दे । अपनी इस वासना की उत्तेजना से प्रेरित होकर वह एक के बाद दूसरे पुरुष के चंगुल में फँसती है और दुनिया की ठोकरें खाती है ।

त्याग या ग्रहण --

इसमें गांधीवाद को त्याग और समाजवाद को ग्रहण का दर्शन मानकर उनके बीच संघर्ष कराया है । इस नाटक का धर्मध्वज गांधीवादी है और नीतिराज समाज वादी । गांधीजी के सिध्दान्तों को निष्ठापूर्वक स्वीकार करनेवाले सेठ गोविंददास जैसे नेताओं को अब इस बात की आवश्यकता होगी कि वे मार्क्सवाद से प्रभावित पश्चिमी समाजवाद के मुकाबले गांधी दर्शन की श्रेष्ठता, उच्चता का उद्घोष करें । त्याग या ग्रहण इसी प्रेरणा का परिणाम है ।

इस प्रकार सेठ गोविंददासजी के समस्या नाटक है ।

२) प्रोफेसर कृपानाथ मिश्र ---

सेठ गोविंददासजी के बाद हिंदी के समस्या नाटककार है प्रोफेसर कृपानाथ मिश्र । इनकी सबसे प्रसिध्द रचना है -

'मणिगोस्वामी' --

'मणिगोस्वामी' विधुर धनी जमींदार है । वह अपने बच्चों के प्यार में अपनी पत्नी का वियोग सह लेता है । बडा बेटा वीरेन उच्चपद पर आसीन होने के लिए प्रशिक्षण लेने विलायत जा रहा है । छोटा बेटा अनिल पढाई खत्म कर कलकत्ता शीघ्रही जानेवाला है । बेटी शामा का विवाह हो गया है और उसकी गोद जल्द ही भरनेवाली है । इस प्रकार मणिगोस्वामी संतुष्ट है ।

इस सुखी परिवार में आग लगाने के लिए [illegible] आता है और मणिगोस्वामी

को सुझाता है कि वीरेन के विलायत अनिल के कलकत्ता और शामा के ससुराल जाने के बाद वह बिल्कुल अकेला पड जायेगा । नौकर चाकर तो अपने कभी बन ही नहीं सकते । इसलिए घटक उससे दूसरी शादी की सलाह देता है । धीरे धीरे घटक मणिगोस्वामी के मनोविज्ञानपर छा जाता है और मणिगोस्वामी दूसरी शादी करते है ।

विवाह के बाद मणिगोस्वामी को अनुभव होता है कि, जो बच्चे उससे बेहद प्यार करते थे, शादी के बाद उससे घृणा करते है । जो रैयत उसे देखते ही विनीत भाव से श्रध्दापूर्वक सलाम-पर सलाम करती थी, वह आज उसकी छाया से डरती है ।[1] मणिगोस्वामी की नयी नवेली पत्नी-उससे घृणा करती है, उसे मणिगोस्वामी के उम्र से घृणा है । उसको सिर्फ उसके रुपये से प्रेम है, जिसे लेकर अंत में वह चम्पत हो जाती है ।

मणिगोस्वामी का आहत अभिमान चीत्कार कर उठता है । वह कह उठता है --`मेरे बच्चों ! मैं राह का भिखारी नहीं बन सकता । मुझे पेड के नीचे भूखा और तडपता हुआ देखने का तुम्हारा अरमान पूरा न होगा ।` मणिगोस्वामी जिस परिवेश में रहता आया है, उसके अनुरुप ही वह सोच पाता है कि उसके बच्चे उसे सम्पति विहीन करना चाहते है और इसी लिए वह अपने बेटों का नाम जायदाद से काटने का फैसला करता है ।

परंतु उसे अपने बेटे को समझने में बडी भूल हुई है । वीरेन का उससे संघर्ष तत्वनिष्ठ है । वह समाज सेवक, है, उसका विरोध अपने उस समाज से है, जिसने ढलती उम्र में बूढों को छोटी-छोटी नादान बच्चियों का पति बनकर उनका सर्वनाश करने का अबाध अधिकार दिया है ।

वीरेन जाति की शूद्र सीमा का कायल नहीं है । उसका प्रेम माया से है, जो निर्धन शूद्र जाति की है । वीरेन माया से समाज की परवाह से मुक्त करना चाहता है परंतु माया सठि संस्कार को नहीं छोडती । उसकी शादी एक वृध्द से होती है, उसका सर्वनाश होता है । वीरेन इन प्रवृत्तियों का विरोध करता है ।

---

१ कृपानाथ मिश्र - मणिगोस्वामी - पृ. २७ ।

जिस बुराई के विरुध्द वह लडता आया है वह स्वयं उसके पिता में है । स्वयं उसके शरीर में एक विलासी कामुक पिता का अपवित्र खून है । इसलिए वह चाहता है कि पिता के दूषित अपवित्र खून की परम्परा का अन्त हो । इसलिए वह अनिल को मारकर आत्मघात करना चाहता है । अपनी बहन श्यामा का गर्भपात ईश्वरीय वरदान समझा करवाता है । अपने पिता का विरोध वह जमींदारी की गद्दीपर बैठने के स्वार्थ के कारण नहीं करता । उसके आगे सिध्दान्त का प्रश्न है, जीवन के मूल्य का प्रश्न है । मगर वीरेन हार जाता है ।

वीरेन ने समाज के दो पहलू को देखता है - निर्धनता और कामुकता । मिश्र जी ने इसका कोई समाधान नहीं दिया है । नाटक का उद्देश्य भलीभाँति पूरा होता है ।

श्री. गणेशप्रसाद द्विवेदी ---

द्विवेदी जी ने भी उत्तमोत्तम नाटक प्रदान किये ।

१) सोहाग बिन्दी ---

इसमें दाम्पत्य जीवन की असफलता और यौन-समस्या की प्रस्तुति हुई है । इसके मुख्य पात्र है - बी.एन.डब्ल्यू.रेल्वे के छोटे-से स्टेशन मास्टर काली बाबू और उनकी युवा पत्नी प्रतिमा ।

काली बाबू अपने काम में व्यस्त दिनभर रहते है और रात को डयूटी बजाते है । प्रतिमा के पास बैठकर कुछ पल गँवाना,उन्हें लाजिमी नहीं लगता । प्रतिमा ऊबता जाती है, ऊपर से छोटा-सा गाँव,मनोरंजन का कोई साधन नहीं है । अकेलेपन की इस घुटन में प्रतिमा तिल तिलकर जीरही है । काली बाबू को पति-पत्नी के जीवन में बहुत कुछ होता है पता नहीं ।

पति की निरपेक्षता जड यांत्रिक वातावरण की भयंकर उदासी और काट खानेवाली तनहाई के बीच काली बाबू के मौसेरे भाई विनोद के आने से उत्सव छा जाता है । तब से उसका जीवन चहकने महकने लगा । बहुत दिनों बाद वह शृंगार

करती है । कब से खाली पडी हुई सोहाग बिन्दी की शीशी से अपने भाल को दीप्त करती है । दूसरे दिन विनोद जाता है जो वापिस नहीं आता । प्रतिमा का अतृप्त यौनभाव विनोद की आशा में भटकता रहता है और वह जीवन की बाजी हार जाती है । उसकी मृत्यु के बाद काली बाबू उसकी संदूक खोलने के बाद विनोद के नाम प्रतिमा का पत्र पढकर सन्न रह जाते हैं । पत्रपर सोहाग-बिन्दी की शीशी खुलकर खून का धब्बा बना रही है ।

इस प्रकार पति काली बाबू की निरपेक्षता के कारण पत्नी प्रतिमा का यौन-भाव अतृप्त रहा । सामाजिक मर्यादाओं के बंधन के कारण उसे विनोद नहीं मिल सका और वह काल-कवलित हुई । शीर्षक समर्पक है ।

वह फिर आयी थी ---

इसमें बिफल प्रेम की समस्या है । कवि सिध्दिनाथ मनोरमा से प्यार करता है परंतु दोनों का विवाह नहीं हो सका । मनोरमा का ब्याह दूसरे के साथ होता है । छ: वर्षों बाद सिध्दिनाथ का साहित्यिकों के बीच सम्मान होनेवाला है, कंकाल की मूर्ति बन उसके साथ जो वादा किया था, मिलने का पूरा करने आयी है । वह अपना पूरा वृतांत कहने जाती है, सिध्दिनाथ उसे अपनी बांहो में लेना चाहता है तब वह औंधे मुँह गिरता है । स्पष्ट है , वह मनोरमा की छायामूर्ति नहीं है उसके प्रेत को । इस प्रकार मानवीय पृष्ठभूमि में विफल प्रेम की कथा की मार्मिक अभिव्यंजना द्वारा बताया गया है कि अनमेल विवाह जान का ग्राहक बनता है ।

दूसरा उपाय ही क्या है ?

इसमें स्त्री की बेबसी का चित्र उपस्थित किया है । सितो और सुरेश बचपन के साथी हैं और जवान होनेपर दोनों का विवाह सूत्र में बाँध देना भी चाहते हैं । परंतु दुर्भाग्य से ऐसा नहीं हो सका और आज सीता सुविख्यात रईसजादे नरेन्द्रबाबू की सहधर्मिणी है । सुरेश सितो से मिलना चाहता है, बातें करना चाहता है । परंतु उसका मित्र महेश उसे ऐसा करने से रोकता है क्योंकि अब वह परायी स्त्री है ।

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

सुरेश अपने जिदपर अडिग सीता के घर जाता है । सीता उससे मिलने से इन्कार करती है । सुरेश घायल होता है ।

सुरेश के अपमान के विषय में सोचकर सीता का पति नरेंद्र खिन्न होता है । वह चाहता है कि सुरेश को सम्मान से बुलाया जाये । परंतु सीता उसकी चर्चा भी पसंद नहीं करती । नरेन्द्र को अहसास होता है कि सीता के दिल का घाव काफी गंभीर है । भारतीय हिंदु विवाह संस्था का नियम हिंदू नारी को अपना इच्छित वर प्राप्त करने की सुविधा नहीं देती ।

सर्वस्व समर्पण --

इसमें प्रेमियों - दो प्रेमियों की एक ही प्रेमिका को प्यार करने की कथा है । इसका पता तबतक नहीं चलता जब तक एक की शादी नहीं हो जाती ।

प्रस्तुत नाटक में परस्पर साहचर्य की सहज स्वच्छदंता के बीच उस वृति का अनजाने जन्म होता है जिसे 'प्रेम' की संज्ञा प्राप्त है । विनोद और उमा के विवाह के पहले न तो विनोद और न ही ऊर्मिला को अनुभव होता है, कि वे एक-दूसरे को चाहते है भी । मगर इस बात का अंदाजा होता तो विनोद का उमा के साथ विवाह नहीं होता । विनोद के विवाह बाद उमा की तेज निगाहों की सतर्कता पत्नी के अधिकार की सजगता, विनोद और निर्मला को सच के दर्शन करा देती है । निर्मला के पास एक ही चारा है कि वह उमा और विनोद के जीवन से चली जायें । इसीकारण वह मरने की अच्छी सी तदबीर खोजने लगती है ।

विनोद पुरुष है, समाज से लोहा लेने का हौसला रखता है । निर्मला उसके मामा की बेटी है, समाज ऐसे विवाह की मंजूरी नहीं दे पाता । वह विवाह विधान को एक भ्रम कहकर एक बडा प्रश्नवाचक चिन्ह खडा कर देता है । मगर निर्मला में इतनी हिम्मत नहीं । इधर उमा को अपने सुहाग के सर्वस्व को उसकी प्रेमिका के लिए अर्पित करना होता है ।

गोविंद वल्लभ पंत --

अंगूर की बेटी --

इसमें मद्यपान के दुष्परिणामों,बुराइयोंपर विचार किया गया है । धनी पिता का उत्तराधिकारी ब्राहमण पुत्र मोहनदास अपने मित्र माधव के बुरी संगत में पड अपना सबकुछ बेचते हैं । यहाँतक कि अपनी साध्वी धर्म पत्नी कामिनी के सारे गहने बेच देता है। इसी शराब के कारण उसकी अंतिम सम्पति - उसका मकान भी अग्निदेव की भेंट चढ जाती है । मोहनदास को शराब की लत ने कहीं का न छोडा है । वह गंदी नाली में पडा रहता है, जिसको वह सारे दुःखों,आपत्तों से छुटकारा पाने का स्थान समझता है । जिस शराब को उसने पहले पहल दवा के तौरपर इस्तेमाल किया था, वह अब धीरे-धीरे उसके प्राणों की जगह में बस गयी । "[१] वह पूरीतरह खाली हो गया, यहाँतक कि वह अपनी ही पत्नी की हत्या करने का अपराधी भी बना ।

समस्या का समाधान प्रस्तुत करके आदर्श की स्थापना की है । उनका बाबा बनवारी,मोहनदास को विनोद का छद्मवेश धारण करनेवाली मोहनदास की धर्मपत्नी के संरक्षण में लाकर, शराब की मात्रा कम कर अंत में उसे बुरी लत से रिहा कर देते हैं । इस तरह कथा का आदर्शात्मक अंत है ।

सुहाग बिन्दी --

इसमें पंतजी ने हिंदु घर की "पत्नी" की समस्या उठायी है । स्कूल मास्टर कुमार की पत्नी विजया पति की अनुमति लिए बिना अकेली गंगा-स्नान के लिए घर से बाहर निकल पडती है । रास्ते में कोई बेहोश करके भगा ले जाता है । जाते समय दुर्घटना होती है, जिसमें विजया को भगा ले जानेवाला घायल होता है, विजया अस्पताल पहुँचायी जाती है । होश आनेपर वह जल्द से जल्द पति के पास पहुँचने

१ गोविंद वल्लभ पंत - अंगूर की बेटी - पृ.११ ।

A
11698

भागती है। पर वह घर पहुँच नहीं पाती। राह में ज्वर-ग्रस्त होती है, अपने गहने गँवा बैठती है। इसप्रकार वह अखबार बेचनेवाले की सहायता से महिलाश्रम पहुँचा दी जाती है। वहाँ पर वह रोग मुक्त होती है परंतु वहाँ के प्रबंधक की वासना से बचने वह पिता के घर पहुँचती है। पिता का द्वार उसके लिए बंद है। वह उसे पतित समझाते हैं। पिता से तिरस्कृत होकर वह पति के घर आती है परंतु पति ने विजया के श्राध्द से अगले ही दिन रेवा से शादी की थी। विजया परिस्थितियों से समझौता करने को तैय्यार है। वह रेवा के बारे में कुमार को आश्वस्त करती हुई कहती है -- ` मैं उसे अपनी बहन समझाकर सदैव प्रसन्न रखूँगी।` परंतु पति को यह स्वीकार नहीं है। कुमार सेवा को समाधान करते हुए कहता है कि शहर में एक पगली आयी है जो रेवा की सौत होने का दावा करती है। इधर सेवा पूरे घर में विजया के स्पर्श, पदोक ढूँढती रहती है। एक दिन विजया रेवा के पास पहुँचती है और रेवा के प्रश्न के उत्तर में बताती है कि वहीं विजया है। जीवित है और व्यर्थ के अहंकार से वह उसको अपना पता देने में संकोच कर बडी भूल की है। रेवा विजया को अपने पास रखकर कुमार की स्वाभाविक प्रवृति बढाती है। अंत में कुमार विजया को स्वीकार करता है। आखिर में कुमार के सामने प्रस्तुत होती विजया सर्पदंश से विषाक्त हो जाती है। इसमें नारी की स्वतंत्रता की समस्या और पुरुष - वर्ग की असहिष्णुता तथा अनाचार की झांकी प्रस्तुत की है।

उदयशंकर भट्ट --

विद्रोहिणी अम्बा ---

देवव्रत भीष्म के पिता शान्तनु ने अपनी वासनापूर्ति के लिए सत्यवती से विवाह किया। उसके दो पुत्र हुए - चित्रांगद और विचित्रवीर्य - दोनों कमजोर, कायर। इन्हीं अपाहिज पुत्रों के राज्याधिकार को सुरक्षित रखने के लिए देवव्रत आजन्म ब्रह्मचारी रहने की प्रतिज्ञा धारण करता है। सत्यवती दोनों बेटे भीष्म के इस त्याग को कायरता मानते हैं। सत्यवती को भी, जिसके लिए भीष्म ने इतना बडा त्याग किया, अंत में यही अनुभव हुआ कि ` उसके दुर्भाग्य की अमिट रेखा में चित्रकार भीष्म का ही हाथ है।`[1]

---

1 उदयशंकर भट्ट - विद्रोहिणी अम्बा - पृ. ३४।

राजपद की भूख और यौवन की न बुझानेवाली प्यास ने उसे कहाँ-कहाँ ले जाकर पटका । इधर भीष्म,कर्तव्य की आग में झुलस रहा है, वह अनुभव करता है कि उसके कारण माता सत्यवती और उसके दोनों पुत्र दु:ख भोग रहे हैं । वह पीडा व्यक्त करते हुए कहता है " एक तरफ पितृ-सेवा,दूसरी तरफ प्रतिज्ञा और उसके फलस्वरूप तीन प्राणियों का असीम दु:ख " कुछ समझ में नहीं आता ।"[१] नाटककार का प्रस्ताव है कि वृद्धों के विवाह करने की प्रथा बंद होनी चाहिए ।

काशिराज की पुत्रियों के क्रम में नाटककारने पुरुष और नारी के सम्बन्धों की समस्या के एक दूसरे पहलू पर विचार किया है । काशिराज ने अपनी पुत्रियों के विवाह निमित जिस स्वयंवर का आयोजन किया है, उसमें हस्तिनापुर के विचित्र - वीर्य को मल्लाह-कन्या सत्यवती से उत्पन्न समझ कर बुलाया नहीं गया । सत्यवतीने इसका बदला लेने के भीष्म को यह आदेश दिया कि काशिराज की कन्या का बलपूर्वक हरण करें । इस स्वयंवर में बूढे भी आये हैं । विदूषक का प्रस्ताव है कि स्वयंवर में सिर्फ नवयुवक ,अविवाहित आये ।

अम्बा विद्रोहिणी है । वह रुढियों को तोडने का निश्चय करती है । उसकी शिकायत है कि पुरुष ने पराक्रम के मैदान में आज्ञा का जाल बिछा रखा है । पुरुष के पौरुष की यही तो निशानी है कि वह स्त्री को अबला बनाये ।[२]

वैसे तो पुरुष समाज ने स्वयंवर का विधान कर नारी को अपना जीवन साथी चुनने की स्वाधीनता दे रखी है । किंतु ऐसा करके उसने एक ऐसी निकम्मी प्रथा चलायी है, जिसके कारण" पुरुष को स्त्री की दृष्टि में कृपा-पात्र बनना पडता है ।" इसी का प्रयोग कर वह काशिराज की कन्याओं का हरण करता है ।

---

१ उदयशंकर भट्ट - विद्रोहिणी - अम्बा - पृ.४५ ।

२ - वही - ,, पृ.५३ ।

पुरुष की दृष्टि में न तो नारी के गौरव का कोई अर्थ है, न ही उसके समर्पण का । भीष्म को यह बताकर, कि वह शाल्व की अनुरागिनी है, जब अम्बा शाल्व के पास पहुँचती है, तो शाल्व का दर्प उसे 'उच्छिष्ट' मानता है । उसका अभिमान उससे कहला लेता है कि स्त्री ही संसार में एक ऐसा पदार्थ है जो केवल एकबार ही स्पर्श किया जाता है । शाल्व का निश्चय है कि उसके जैसा क्षत्रिय जूठन नहीं खा सकता ।

शाल्व के हाथों अपमानित अम्बा अपने जीवनानुभव से यह समझ रही है कि 'स्त्रियों के सौन्दर्य की काई पर फिसलनेवाली पुरुष जाति ने आज से नहीं सदा से स्त्रियों का अपमान किया है ।'[1]

ऐश्वर्य, पद, मर्यादा के आडम्बर की रचना करनेवाले पुरुष ने नारी के साथ सदा ही छल और विश्वासघात किया है । पुरुष जाति के विषय में अम्बा कहती है' सौन्दर्य के दीपक पर जल मरनेवाले पतंगे । इन्द्रियों के दास ।[2]

डॉ.नगेंद्र ने भीष्म और अम्बा के उस संघर्ष को प्रकट करते हुए लिखा है -- भीष्म प्रतीक है अभिमानी पुरुषत्व के, अम्बा प्रतिकृति है पीडित किंतु जागृत नारीत्व की । '[3] अम्बा के चरित्र में आज की जाग्रत नारियों का दर्प स्पष्ट झलकता है ।

इस प्रकार काशिराज की विद्रोहिणी अम्बा के उपाख्यान के आधार पर नये युग की सबसे अधिक ज्वलंत समस्या प्रस्तुत की है ।

कमला --

इसमें कमला नामक एक सुशिक्षित, उदार-हृदयी समाज-सेविका है । दुर्भाग्य से उसका विवाह देवनारायण बूढे जमींदार के साथ हुआ है । देवनारायण पुरुष की मदान्ध अहंमन्यता का प्रतीक है । उसके विचार में नारी का कोई स्वतंत्र नहीं है, वह

---

१ उदयशंकर भट्ट - विद्रोहिणी - अम्बा - पृ.७९ ।

२ - वही - ,, पृ.८१ ।

३ डॉ.नगेन्द्र - आधुनिक हिंदी नाटक पृ.१२३ ।

केवल भोग्या है । बूढ़े देवनारायण को इसका अहसास है, कि वह शक्तिहीन है । कमला के साथ उसका विवाह अनमेल है । परंतु उसे यह अहसास भी नहीं, कि वह कमलापर अत्याचार करता है । कमला का सेवाकार्य उसे पसंद नहीं है । वह अनाथालय से एक बच्चे को लाकर उसे पुत्रवत् स्नेह देती है । वह शंका लेता है कि शशिकुमार कमला का ही अवैधपुत्र है । वह कमला को घर से बाहर करता है । परंतु सच्चाई यह है कि देवनारायण के ज्येष्ठ पुत्र यज्ञनारायण ने उमा से प्रेम किया था, शशिकुमार उसकी ही संतान है । परंतु दुनिया के सामने नैतिक अभाव में उसे अपनी न कह सका और वह शशिकुमार को अनाथालय भेजता है । यज्ञनारायण का यह हीन कर्म कमला को असह्य हो वह उसे घर लाती है । यही ममता उसके लिए भयंकर सिद्ध होती है । आखिर में वह आत्मघात करती है । यहीं ममता उसके लिए जीवन घातक सिद्ध होती है । उसकी आत्महत्या के बाद सत्य प्रकट होता है और देवनारायण पश्चाताप की आग में जलने लगता है । आखिर में वह `आग चारों तरफ आग । पाप जीवन की सांसों में इतना गहरा छिपा है, जाना न था ।` कहते हुए मर जाता है । इस प्रकार कमला अपनी बलि देकर पुरुषों की अहंमन्यता पर विजय पाती है । समस्या की दृष्टि से `कमला` विद्रोहिणी अम्बा की तरह वजनदार नहीं हो पाया है ।

अंतहीन अंत ---

इसमें अनाथालयों में किस प्रकार अनाथ बच्चों का स्वार्थ-सिद्धि के लिए उपयोग किया जाता है, चित्रित है । भट्टजी ने अपने आदर्शवाद से यह कल्पना की है जिन्हें हम क्षुद्र समझते हैं कि वे भी परिस्थितियों से संघर्ष करके अपने को महान बनाने के लिए कभी अनुकूलता पा जाते हैं । उनके अनुसार महनीयता का धन-सम्पत्ति की समृद्धि के साथ कोई अनिवार्य सम्बन्ध नहीं है । वे यह मानते हैं, कि दुनिया में प्रतिकूलताएँ बहुत हैं और इन प्रतिकूलताओं के वात्यचक्र में फँस कर `कमला` और `उमा` जैसे पात्र दुनिया की नजर में जिंदगी की बाजी भी हार जाते हैं । परंतु हमें संघर्ष से भागना नहीं चाहिए । संघर्ष से बल बढ़ता है और कल की प्रतिकूलताएँ आज

---

१ उदयशंकर भट्ट - कमला - पृ.८३ ।

आज की अनुकूलताएँ भी बन सकती हैं । यही आस्था इसमें जगाने की चेष्टा की है ।

हरिकृष्ण प्रेमी ---

रक्षा बंधन ---

इसमें मुसलमानों के प्रति सहानुभूति प्रकट की है । सभी मुसलमान बुरे होते हैं, यह दृष्टिकोन ठीक नहीं है । हिंदू और मुसलमान ये दोनों ही नाम के धोखे हैं, हमें अलग करनेवाली दीवारें हैं । हम हिंदुस्तानी हैं ।[1] प्रेमी जी हिन्दू मुस्लिम समस्या की भीषणता की ओर संकेत करते हैं साथ ही वे राष्ट्रीयता की भावना जगाकर मजहबी तंगदिली को दूर करना चाहते हैं ।

छाया --

इसमें प्रकाश नामक एक ऐसे कवि की जीवन यापन विषयक कठिनाईयों का उल्लेख है, जिसके गीतोंपर दुनिया दिवानी होती है लेकिन यह नहीं देखता कि विश्वसाहित्य को अनमोल सम्पति दान करनेवाले इस कवि को अपनी पत्नी की लाज ढँकने के लिए वस्त्र और अपनी दुधमुँही बच्ची के पीने के लिए दूध खरीदने की शक्ति मिली है या नहीं । अभावों के इस महाजाल में उलझे हुए कवि से दुनिया गीत खोजती है । इस भावुक कलाकार की अव्यावहारिकता का अनुचित लाभ उसका प्रकाशक उठाता है जो नाना प्रकार से उसका शोषण करता है । अपने देश के साहित्यकारों की सचमुच यह एक बडी समस्या है ।

श्री वृंदावन लाल वर्मा --

इसमें श्री वृंदावनलाल वर्मा जी ने हमारे समाज में आज भी जन्म-पत्री की उपयोगिता पर विश्वास और परिस्थिति की विद्रुपता यह है कि ज्योतिषी को घूस दे कर मनोनुकूल निर्णय प्राप्त किया जा सकता है, इसका उद्घाटन किया है ।

---

१ हरिकृष्ण प्रेमी - रक्षा बंधन - पृ. ३६ ।

इसके साथ ही पुरुष समाज का असहिष्णु हो जाना, कि सेवावृत्ति भी अशुध्द, स्वार्थ संकुल, वासना दूषित हो जाना, कोई असाधारण बात नहीं रही है। आजकल के युवक इतने उच्छृंखल अविचारी, असंयमित हो गये हैं कि पूछो मत। परंतु वर्माजी के अनुसार ये ही नवयुवक विद्यार्थी भावना में आकर एक ऐसी बडी बात भी कर गुजरते हैं, जिसपर समाज को नाज हो। इसमें 'गोकुल' एवं 'फूलचंद' ऐसे ही दो विद्यार्थी हैं, जो अपने वर्ग की शक्ति और सीमा दोनों को ही पूर्ण करते हैं।

ग्वालियर रेल्वे स्टेशनपर गोकुल, फूलचंद ट्रेन की प्रतीक्षा कर रहे हैं। साथ ही मंदाकिनी छात्रा, एक फौजी हवलदार मेजर भोंडाराम भी हैं, जो मंदाकिनी को घूरे जा रहा है। उसका घूरना गोकुल, फूलचंद को अच्छा नहीं लगता, वे दोनों भोंडाराम को बेवकूफ बनाते हैं।

उसी समय मजदूर पुनिया बुढियाँ माँ को सहारा दिये आती है, भीख नहीं माँगती, गाना गाकर अपना और माँ का पेट भरती है। भिखारिन समझकर गोकुल जैसा कोई आदमी के उसके साथ छेडखानी करता है तब वह गाली देती है, ऊल-जलूल बिकती है।[1] सभी एक रेलगाडी में चढते हैं, जो बाद में दुर्घटनाग्रस्त होती है। पुनिया, मंदाकिनी दोनों ही घायल होकर पडती है। फौजी भोंडाराम खून देने को तैयार है, पुनिया से विवाह करना चाहता है परंतु जब खाल देने की बात उठती है तब वह विवाह का भी खयाल छोडकर भाग जाता है। इधर फूलचंद मंदाकिनी के लिए खून देने को तैयार है। पुनिया जैसे गरीब, जबान की तेज-तर्रार के साथ विवाह कौन करेगा ? परंतु गोकुल पुनिया की प्राण-रक्षा के लिए रक्त और चर्म दोनों देने के लिए तत्पर हो जाता है।

मंदाकिनी के स्वस्थ होनेपर फूलचंद उसके सामने विवाह का प्रस्ताव रखता है, मंदाकिनी को शादी से इन्कार नहीं मगर वह माता-पिता का आशीर्वाद माँगती है। पढी-लिखी होकर भी विवाह के विषय में अपनी नारी की, स्वतंत्रता का आग्रह नहीं रखती। पुनिया नहीं जानती कि उसे खून और चमडा किसने दिया है। वह

---

1 वृंदावनलाल वर्मा - बाँस की फाँस - पृ.१३।

जानने के लिए उत्सुक है कि आखिर उसके लिए इतना सबकुछ करनेवाला व्यक्ति कौन है ? और जब उसे गोकुल के विषय में पता चलता है तो पूरी भावनाओं से उसका हृदय भर जाता है और वह निरुत्तर होती है । पुनिया की माँ गोकुल के चरित्र को पहचानकर पुनिया से उसका ब्याह कर देती है ।

वर्माजी चाहते है, कि हमारा युवक-समाज जन्मपत्री,नक्षत्र-गणना,दान-दहेज आदि से ग्रस्त विवाह-संस्था के प्रति विद्रोह करें, लेकिन इस विवाह को अभिभावकों का आशीर्वाद भी प्राप्त हो ।

खिलौने की खोज --

इसमें मुख्य पात्र सलिल डॉक्टर है, जिसे गठिया रोग के विशेषज्ञ रूप में ख्याति प्राप्त है, आज जीवन से हार कर मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहा है । सलिल का अपनी सखी सुरूपा से प्रेम था,परंतु नियति उन्हें मिला न सकी । अब सुरूपा सेठ सेतूचंद की धर्मपत्नी के साथ केवल की माँ है ।

इधर सलिल मरने के लिए फौज में भर्ती हुआ, पर वह मर न सका । अब वह यक्ष्मा से पीडित उसी नलगाँव में सेठ सेतूचंद के मकान के किरायेदार होकर नंदिनी नर्स और रामटहक नौकर के साथ रहता है । उसके पास चांदी की एक नारी मूर्ति है, जिसपर सुरूपा की मूर्ति अंकित है, जिसे कभी सुरूपा के पिताजी ने गढवाया था । सलील वह मूर्ति सरूपा के घर से चुरा ली थी । सुरूपा के विवाह के बाद सलील के मन में वह मूर्ति वापिस करने की बात आयी परंतु लोभ में ऐसा होने नहीं दिया ।

भुवन नामक गठिया रोग से पीडित डॉक्टर डॉ.सलील के पास आता है । भुवन को मकान चाहिए । इसी सिलसिले में डॉ.सलिल सेठ सेतूचंद को अपने घर बुलाता है उसके साथ उनका बेटा केवल भी है । वह चांदी का खिलौना लेके आता है ।

तलगाँव में सूखा पडता है, किसानों में बेचैनी फैलती है । गाँव में 'चिमटानंद' पाखंडी साधु रहता है, वह अंध-विश्वासों से,पुत्तुलाल नामक व्यक्ति की सहायता से खूब पैसा कमाता है । डॉ.सलिल को गाँव की जडता देखकर दु:ख होता है । गाँव की सेवा के लिए वह सेवामंडली खडी करता है, जिसके कारण चिमटानंद

से उसका संघर्ष होता है । डॉ.सलिल मरने के लिए वहाँ आया था आज वह जिंदा रहना चाहता है, ताकि वह मुकन की पीडा को खत्म करें और तलगाँव की जनता को जडता,अज्ञानता और कठमुल्लेपन से ऊपर उठा सके ।

इसकी समस्या विफल प्रेम से उत्पन्न जडता की समस्या है । परंतु प्रेम की विफलता से हताश,निराश होकर निष्क्रिय हो जाना,जिंदगी की सार्थकता नहीं है । मनोबल को सबल बनाकर जिंदगी में बहुत कुछ किया जा सकता है ।

धीरे - धीरे --

इस नाटक में वर्मा जी ने एक राजनीतिक समस्या की प्रस्तुति की है । सन १९३५ के भारत शासन विधान के अंतर्गत राष्ट्रीय कांग्रेस ने प्रांतीय क्षेत्र में शासन-भार ग्रहण किया था ।

सत्तारूढ 'राष्ट्रसंघ' की ओर से गोपाल जी ,कन्हैयालाल ,मुबारकअली -मंत्रिपदपर अधिष्ठित हैं और दयाराम सदस्य मात्र अर्थात विधानसभा का सदस्य है ।

किसानों और मजदूरों के शोषण के सवाल को संस्था के छूटभय्ये अपनी नेतागिरी की स्वार्थसिध्दि के लिए साधन बना लेते हैं और सरकार अपनी है इस भरोसे कानून तोडने लगते हैं । बडा गाँव का सगुणचंद नेता किसानों में उत्तेजना फैलाकर उक्त गाँव के जमींदार राव गुलाबसिंह के जंगल में किसानों के साथ घुस कर पेड काटने लगता है । सगुणचंद को जंगल के अधिकार के विषय में कानून की स्थिति पता नहीं है । जोश और दंभ में आकर वह राज्य के मंत्रीपद पर आसीन कन्हैयाजी से उलझाकर कार्यालय से बाहर निकाला जाता है । इधर दयारामजी को यह असह्य हो रहा है कि उसके ही साथी कन्हैयाजी ,मुबारक अली मिनिस्टर हों और वह मामूली-सा एम.एल.ए. ।

इतिहास का प्रमाण है कि सन १९३५ के बाद उन प्रांतों में जहाँ कांग्रेस ने पदग्रहण किया था, समाजवाद का नारा स्वयं कांग्रेसियोंने ही बुलंद किया था, परिणामस्वरूप दक्षिण और वामपंथियों के दो गुटों में विभक्त हो गयी थी ।

वाम पंथ दक्षिण पंथ को दकियानूस, प्रतिक्रियावादी और श्रीमानों का अंतिम आश्रय कहकर बदनाम करता था और अपने को शोषितों का एकांत आश्रय घोषित करता था । सतारूढ गोपाल जी ,कन्हैयाजी को किसानों और मजदूरों के प्रति होनेवाले शोषण का अंत अभीष्ट नहीं था । उनका कहना है कि उनकी सरकार किसानों और मजदूरों के हित के लिए जो कुछ संभव है, करती ही है । जरूरत यह है कि असंयमित तत्वों का नियंत्रण किया जाये और देशहित का खयाल कर आवश्यकतानुसार अपने साथियों के साथ भी कडाई बरती जाये ।

नाटककार कहना चाहता है, कि स्वतंत्रता उच्छृंखलता के लिए लायसेन्स नहीं हो सकती । कोई भी राष्ट्र बेलगाम घोडे की तरह उच्छृंखल होकर उन्नति नहीं कर सकता । अधिकार पर कर्तव्य का नियंत्रण होना ही चाहिए । हमें यह समझना चाहिए, कि राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान व्यक्तिगत स्वार्थ की सीमा में रहकर नहीं किया जा सकता ।

भगवती प्रसाद वाजपेयी ---

छलना --

इसमें इस युग की समस्या पर विचार किया गया है । प्रस्तुत नाटक के नायक - इन्टरमीडिएट कालेज के अल्प वेतन भोगी हिंदी अध्यापक-बलराज की पत्नी कल्पना को अपने वर्तमान जीवन के प्रति असंतोष है । पति की छोटी सी आमदनी में उसका गुजारा नहीं होता । बलराज अपनी पत्नी के प्रति अपने उत्तरदायित्व के विषय में असावधान नहीं है और यथाशक्ति उसका निर्वाह करता है । लेकिन कल्पना वह नारी है, जिसकी इच्छाओं का अंत नहीं है । वह प्राप्य से संतुष्ट न होकर अप्राप्य के लिए झगडती है । वह बाह्याडंबर के मोहावरण का परित्याग नहीं कर सकती और कल्पित दु:ख की पीडा का अनुभव करके व्यग्र होती है । उसकी इच्छाओं का अंत नहीं है । ऐहिक सुखों के उपभोग को जीवन की चरितार्थता माननेवाली कल्पना अपने अभावों को देख अपनी स्थिति को ऐसी शिक्षा दी जाय कि वे समर्थ होकर स्वावलंबी हों, पति पर निर्भर न हों,पुरुष समाज के लिए वे

ज्वाला की मूर्ति हो और उनका संहार ही उनका [illegible] उद्देश्य हो ।`[1]

इसमें कामना ` नामक दूसरी स्त्री भी हैं । यह अवकाश प्राप्त जज मि. टंडन की ग्रॅजुएट कन्या और विलास की दोस्त हैं । वह मानती हैं कि `पुरुष जाति से परे नारी की गति नहीं हैं ।`[2] वह यह भी मानती हैं कि नारी शक्ति के बिना पुरुष भी अपूर्ण हैं ।

कामना और कल्पना के प्रमाणपर यह सिध्द होता हैं कि आज की नारी पुरुष के पैरों की जूती बन कर रहना नहीं चाहती इसमें उसका स्वाभिमान कुंठित होता हैं ।

बलराज पैसे कमाने के उद्देश्य से वह बंबई चला जाता हैं । कल्पना पर कोई अंकुश नहीं हैं । मगर वह विलास से सुखी नहीं हो पायी । क्योंकि वह विवाहिता हैं अपनी सीमा का विस्मरण नहीं कर पाती । वह पुरुष से स्वतंत्र होना चाहती हैं लेकिन वह यह जानती हैं कि स्वतंत्र होकर कैसे रहे ?

इसमें चम्पी नामक स्त्री आयी हैं, जो भीख माँगकर गुजारा करती हैं, उसे पति ने निकाल दिया हैं । वह कामना की तरह सुशिक्षिता हैं और न कल्पना की तरह प्रबुध्द आधुनिका । उसके हृदय में विलास की कोई चिंता नहीं हैं । उसे नारी के अधिकारों के विषय में कोई चिंता नहीं हैं । उसका जीवन उन दोनों की अपेक्षा संतोषपूर्ण हैं । द्विवेदी जी ने यह बताया हैं कि आज की मुख्य समस्या यह हैं कि मध्यवित्त परिवार का पति बहुत व्यस्त हैं और पत्नी एकदम कर्महीन । द्विवेदी जी ने संतोष वृत्ति की एक हल्की सी झांकी प्रस्तुत करने के उद्देश्य से चम्पी की अवतारणा की हैं । दु:ख उसके जीवन में कम नहीं हैं । कर्मसंघर्ष में पडकर भुलाती हैं । द्विवेद जी कहना चाहते हैं कि कर्महीन जीवन दु:ख की अनुभूति को और भी तीव्र करता हैं ।

` छलना ` को नाटककारने ` पुरुष `, नारी, कल्पना, कामना, निद्रा, विलास आदि भाववृत्तियों का एक कलापूर्ण रूपक ` कहा हैं ।`[3]

---

१ भगवतीप्रसाद वाजपेयी - छलना - पृ.४७ ।

२ - वही - ,, पृ.४७ ।

3 - वही - ,, मुखपृष्ठ ।

नाटक का मूल प्रश्न पुरुष और नारी के सम्बन्धों का न होकर वर्तमान सभ्यता से जुड़ा हुआ है । वर्तमान सभ्यता में आदमी विकास क्यों नहीं कर पाया है, आज हमारा जीवन इतना दु:खपूर्ण क्यों है ? आदमी भौतिकता की मृगमरीचिका के पीछे दौड़ता है । `छलना` के सारे मुकाबले `बलराज` जो आदर्श का मूर्त रूप है । वह जानता है कि कामनाओं की कोई सीमा नहीं होती और मनुष्य की शक्ति की एक निश्चित सीमा है । अपने से संतुष्ट, अपने में पूर्ण इस आदर्श व्यक्ति के संसर्ग में आकर कामना के सारे उत्ताल भाव शांत पड जाते हैं, जिंदगी का एक किनारा उसे मिल जाता है । इस आदर्श की प्रतिभिता के उपरांत कल्पना के हृदय के सारे उद्वेग - शांत पड जाते हैं । वह अनुभव भी करती है कि शारीरिक भोग के परे जो आत्मिक आनंद होता है, वही मुख्य है । बलराज के पहुँचते ही विलास आत्मघात कर लेता है ।

पं. भगवतीप्रसाद वाजपेयी ने यह संदेश दिया है कि हम यदि अपने जीवन के आदर्श को स्थिर कर लें तो फिर हमें न तो अपने से शिकायत होगी और न किसी दूसरे द्वारा हमारा संघर्ष ही होगा । नाटककार उद्दाम लालसाओं के व्यक्तिवाद का विरोधी है और वह `जियो और जीने दो` के आदर्श का पोषक है । आज की भाग-दौड़वाली सभ्यता से वह इसीलिए विरोध है और वह चाहता है कि मनुष्य एक ऐसे समाज का विधान करे, जिसका आधार न्याय व प्रेम हो ।

पृथ्वीनाथ शर्मा ---

दुविधा --

इसमें सुधा नामक एक आधुनिक नारी की समस्या उठायी गयी है । अपनी योग्यता, भावुकता, भारतीय सभ्यता और अपने रूप की विजय दुंदुभि बजाकर वह अभी विलायत से लौटकर आयी है । इस उच्च शिक्षाप्राप्त महिला की समस्या है कि वह प्रेम को समझ ही नहीं पाती । उसका प्रेम समय काट लेने और दिल बहलाव कर लेने का साधन भर है । वह चापलूसी को प्रेम कहती है और सच्चे प्रेम को जरा-सा भी पहचान नहीं पाती ।`

विलायत में सुधा का परिचय बैरिस्टरी पढनेवाले केशव से होता है । केशव उसके रुप,भावुकता को चाहता है, साथ ही उसके पिता की अतुल सम्पति का लोभी भी है ।

केशव के प्रति सुधा का आकर्षण भावुकता की प्रेरणा है । उसका मित्र विनय है, कभी उसने भी उसका ध्यान खींचा था । विनय केशव का निकट मित्र है और वह सुधा के मृग-मरीचिका के पीछे रहने दौडने को बिनावजह मानता है परंतु वह कैसे कहें ? सुधा विनय की हल्की चेतावनी में विनय का बदला समझाती है ।

सुधा को आधुनिक शिक्षा और बुध्दियुग की विकृतियोंसे ग्रस्त स्वच्छंद प्रकृति अपने मन की रानी के रुप में इस नाटक में प्रस्तुत करके सुझाना चाहते है कि ऐसी नारियोंकी क्या दुर्दशा होती है ? सुधा जो प्रेम का मर्म नहीं जानती, बुध्दि और तर्क को अंतरात्मा के ऊपर मानकर जीवन की बाजी हारती है । सुधा के चरित्र द्वारा आधुनिक नारियों की अव्यवस्थित को नाटककार ने व्यंजित किया है ।

साथ --

इसमें कुमुद विवाह करके स्वतंत्रता खो देना नहीं चाहती । वह जानती है कि विवाह के बाद नारी पर पुरुष के स्वामित्व की मुहर लग जाती है । कुमुद की माँ उसे शिक्षा देती है कि वह अर्वाचीनता आधुनिकता के पचडे में न पडे । प्रेमी का निर्मल हृदय देखें । कुछ समय वह द्विविधा में पडती है परंतु अजित के हृदय के विचारों के प्रति अर्पित हो उसकी पत्नी बनकर यह अनुभव करने लगती है, कि पश्चिमी सांचे में ढलकर हमारा जीवन अस्वाभाविक हो गया, उसपर अशांति और नीरसता छायी रहती है । कुमुद अपने वैवाहिक जीवन से संतुष्ट है । ननद पद्मा की बीमारी में उसके बच्चे मोहन के संपर्क में आनेपर उसको मातृत्व का अहसास होता है । वह मानती है, कि आज की झूठी चमकवाली सभ्यता के मोह में फँसकर बच्चों से विमुख होना, माँ बनने से इन्कार करना अपरिपक्व मस्तिष्क का दोष ही कहा जायेगा । इस अनुभव के बाद वह अजित को एक बच्चा भेंट देने का निश्चय करती है । नाटककार यह मानते है कि नारियों ने अधकचरे ज्ञान के बलपर हमारे समाज को

बदलने का जो असंभव तथा शायद वांछनीय प्रयास करना शुरु किया है अप्रकृत है ।

अपराधी --

अपराधी का वाचक एक भावुक नव युवक अशोक है, जो हमेशा सपने बुनकर उन्हीं सपनों को देखने में रात बीताता है । माता-पिता की मृत्यु के बाद वह चाचा के पास है, चाचा उसे हाकिम बनाना चाहता है, जब कि अशोक कविता, कहानी लिखना अपना जीवनोद्देश्य बनाना चाहता है । वह एक चोर को भागने देता है और स्वयं भीड के लोगोंद्वारा चोर समझा जाता है । लांछन और नाना प्रकार के प्रवादों का शिकार होता है । अपनी प्रेमिका लीला के प्रयत्न के बावजूद वह कानून के चंगुल से निर्दोष नहीं छूट पाता । इतने में असली चोर न्यायालय में आकर अपना अपराध स्वीकार करता है ।

कथा की यह आदर्शात्मक परिणति समस्या के लिए कोई गुंजाइश नहीं रखती । हमारा कानून ऐसा अंधा है कि वह बस अपराध देखता है । कानून की इसी समस्या पर विचार प्रकट है ।

उपेन्द्रनाथ अश्क --

लक्ष्मीनारायण मिश्र के बाद उपेन्द्रनाथ अश्क जी दूसरे अद्वितीय समस्या - नाटककार हैं ।

स्वर्ग की झलक --

आलोच्य नाटक का उद्देश्य मानव को अंधानुकरण से मुक्ति दिलाना है । नाटक का मूलाधार विवाह समस्या है किंतु आधुनिक शिक्षा के प्रभाव का दिग्दर्शन भी कराया गया है । इसमें उन उच्चशिक्षित युवतियोंपर व्यंग्य किया गया है जो अधिकार-प्राप्ति के लिए अहंवादी बनकर अपने कर्तव्य की उपेक्षा करती हैं और पारिवारिक सुख-शांति को नष्ट कर देती हैं । अनिश्चयवादी युवकों पर भी व्यंग्य है जो अपने भले-बुरे को समझ नहीं पाते । भावावेश में आकर कुछ का कुछ कर बैठते हैं ।

आलोच्य नाटक की भूमिका में अश्क जी ने लिखा है कि नाटक का

उद्देश्य शिक्षा अथवा आधुनिक नारी के विरुध्द न होकर, उस मनोवृति के विरुध्द होता है जो हमारे यहाँ की अधिक शिक्षित लडकियों में पैदा होती जा रही है कि वे अपना बाहर संभालने के जोश में घर बिगाडती जाती हैं .... आज प्रत्येक शिक्षित लडकी के लिए शिक्षित, पूर्णरुप से आधुनिक साथ ही धनी पिता का मिलना कठिन है ... तब यदि उसे विवाह करके सीधा सादा जीवन बिताना है तो उसे इस सीधे सादे जीवनपर नाक-भौं न चढानी चाहिए।' [१]

युग की माँग यह है कि, नारी अपने अधिकार के प्रति सजग हो, किंतु अपने कर्तव्य की ओर से आँख न मूँदे। शिक्षा का अर्थ फैशनपरस्ती और उच्छृंखलता नहीं प्रत्युत विवेकदर्शिता है। प्रत्येक युवक युवती का कर्तव्य है, कि वह अपने को यथासंभव बाह्याडंबरों से मुक्त रखें और जीवन में समन्वय लाने का प्रयत्न करें।

उच्चशिक्षित नारी फैशनपरस्त और अधिकार की प्यासी बन जाती है। उमा द्वारा नाटककार इसका चित्र खिंचते हैं। उसकी जिंदगी का ध्येय केवल स्वार्थी एवं निजी अभिलाषाओं की पूर्ति है। अश्कजी ने नाटक के उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए कहा है 'चाहिए यह, कि जहाँ शिक्षा पाकर नारी स्वाभिमान, आत्म-विश्वास, व्यापक ज्ञान तथा समाज सेवा की भावनायें पायें, वहीं अपना संतुलन भी न खोये। तभी समाज में व्यवस्था कायम रहेगी।' [२]

अलग अलग रास्ते --

नारी की सामाजिक प्रतिष्ठा इस नाटक का मूल प्रश्न है, साथ ही विवाह और प्रेम की समस्या का विश्लेषण भी है। आधुनिक नारी परिवार की मिथ्या प्रतिष्ठा के हेतु अपना जीवन नष्ट नहीं कर सकती। वह उन रुढियों से विद्रोह करती है, जो उसके अधिकारोंपर आघात करते हैं। उसमें इतनी शक्ति और विश्वास है कि वह अपना मार्ग स्वयं प्रशस्त कर सकती है। पति परित्यक्ता रानी पिता से मदद की अपेक्षा न कर, अपना मूल्य चाहती है।

---

१ उपेन्द्रनाथ अश्क - स्वर्ग की झलक - भूमिका।

२ - वही - भूमिका।

रानी नाटक का प्रगतिशील पात्र है । वह अपने व्यक्तित्व के प्रति सजग है । वह पुरुष से समाधिकार चाहती है, पति से सौहार्द और स्नेह की अपेक्षा रखती है । रानी की प्रगतिशीलता को पुष्ट करने अश्क जी ने पूरन की सृष्टि की है, जो निरंतर रानी को रूढियों से विद्रोह करने के लिए सचेष्ट करता रहता है । वह एकांगी दायित्व नहीं चाहता । पति-पत्नी दोनों के सहयोग से जीवन गतिशील होता है । पति परमात्मा नहीं उसका साथी है, साथ निबाहने की जिम्मेदारी पत्नीपर नहीं पति पर भी है ।`[1]

नाटक की मूल कथा को निखारने के लिए राज (रानी की छोटी बहन) की कथा जोड दी गयी है । वह भाग्य के नामपर सबकुछ सहती रहती है । पति के अत्याचारों का तनिक भी ध्यान न कर उसकी सेवा करना वह अपना धर्म मानती है । पुराने संस्कारों एवं रूढियों में उसकी दृढ आस्था है ।

राज और रानी के विरोधी विचारों को प्रस्तुत कर अश्क जी ने उस मनोवृत्ति को लक्षित करने का प्रयास किया है जिससे आज की नारी ग्रसित है । वह अधिकार चाहती है, परंतु परंपरा को छोडने का साहस उसमें नहीं है । यहीं जीवन का संघर्ष है । राज और रानी नारी के दो प्रतिनिधि विचारों की प्रतीक है । एक प्राचीनता से चिपकनेवाली है तो दूसरी उसे एक झटके में तोडनेवाली ।

अश्क जी ने समस्या का बुद्धिग्राह्य समाधान प्रस्तुत किया है । नारी की आर्थिक विपन्नता,नारी के मार्ग की सबसे बडी बाधा है । पूरन के माध्यम से इसका तर्क दिया गया है । समस्या का गांभीर्य कम है ।

<u>कैद</u> --

इसमें नारी जीवन की एक समस्या का स्वरूप प्रस्तुत किया है । वैवाहिक विषमता के चित्रण के साथ भारतीय जीवन में नारी किस प्रकार विषमताओं में

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अलग - अलग रास्ते - पृ.३८ ।

घुटकर अपना जीवन नष्ट कर रही हैं दिखाना, नाटककार का उद्देश्य है । ` अप्पी `
इन असंख्य नारियों की प्रतीक है जो माँ-बाप के द्वारा किसी एक ऐसे व्यक्ति के गले मढ़ दी जाती हैं, जिसकी प्रकृति से उसका साम्य नहीं है । फलत: उनका जीवन भार बन जाता है ।

अप्पी का विवाह प्राणनाथ से कर दिया जाता है । अप्पी की बड़ी बहन दिप्पो की मृत्यु के बाद अप्पी के पिता ने अप्पी का विवाह प्राणनाथ से किया । इस समयतक अप्पी के मन में दिलीप के प्रति स्नेह हो चुका था । दोनों ने अपना स्वर्ग बसाने का प्रण किया था, किंतु वे अरमान व्यावहारिक रूप पा सके । दिलीप से बिछुड़कर अप्पी ने अपनी सारी चंचलता, सौंदर्य और प्रफुल्लता खो दी है । उसका जीवन स्रोत सूखता गया । विवाह के बाद अप्पी का दाम्पत्य जीवन उसके लिए कैद बन गया । उसके जीवन के असंतोष ने उसके पति बच्चों को भी आक्रांत कर रखा है । आरंभ से अंत तक नाटककार अप्पी के मन के विषाद को प्रकट करने प्रयत्नशील है ।

उड़ान --

उड़ान में अश्क जी ने नवीन सामाजिक सम्बन्धों को मान्यता दी है । नारी के प्रति जिन गलत दृष्टिकोणों को आजतक समर्थन मिलता आ रहा है । अश्क जी ने इसका तीव्र विरोध किया है । इसके लिए उन्होंने माया के रूप में एक ऐसी बुध्दिवादी नारी की अवतारणा की है । इसमें रूढ़ियों, सामाजिक संस्कारों से जूझने का साहस है । सामाजिक विकासक्रम में नारी के प्रति जो गलत धारणाएँ विकसित हुई उसके मुख्य तीन रूप नाटककारने दिये हैं । आदिकाल में पुरुष नारी को अपना शिकार समझता था, नारी जीवन का कोई मूल्य नहीं था । आवश्यकता-
-नुसार उसका उपभोग लिया जाता था । उसके बाद मानव की भावुक प्रवृति व लवती हुई । पुरुष नारी के रूपसौन्दर्य से अभिभूत हो उसे देवी मानने लगा । समय के विकास के साथ व्यक्तिगत संपति का विकास हुआ । इस स्थिति में पुरुष ने नारी को अपनी सम्पति मान लिया । यहाँ उल्लेखनीय यह है कि वह तीनों धारणाओं का विरोध करके अपने स्वतंत्र अधिकार की मांग करती है । माया तीनों प्रवृत्तियों के प्रतीक तीन पुरुषों से मिलती है ।

माया के विचार से नारी न तो श्रद्धा और पूजा की वस्तु है, न वासनातृप्ति का साधन मात्र है और न वह किसी पुरुष की सम्पत्ति है । वह पुरुष की संगिनी है, सच्ची साथिन है ।

'कैद' में जो नारी पराजित थी, 'उडान' में वह बंधन मुक्त है, स्वतंत्र है । 'कैद' और 'उडान' इसी अर्थ में पूरक है । डॉ.धर्मवीर भारती ने ठीक ही कहा है --'कैद' और 'उडान' दोनों मिलकर गत्यात्मक स्थिति का सर्जन करते हैं, समस्या को प्रतिबिम्बित करते हुए भी उसे निश्चित लक्ष्य और एक समाधान की ओर प्रेरित करते हैं, जैसे किसी व्यक्ति का बाँया और फिर दाँया दोनों चरण क्रम से उठकर उसके व्यक्तित्व को एक गति दे दे, उसे एक कदम आगे बढा दें ।'[१]

भँवर --

यह चरित्रप्रधान नाटक है । बदलते हुए मूल्यों के साथ संतुलन स्थापित कर लेना, सहज संभव नहीं है । जब किसी को कोई वस्तु अचानक प्राप्त होती है तो उसका समुचित उपभोग वह नहीं कर पाता । पाश्चात्य शिक्षा ने आधुनिक भारतीय युवती को इसी विभ्रम में डाल दिया है । वह स्वयं को समझाने में असमर्थ है ।

भँवर में आधुनिकाओं की उच्छृंखलता तथा कुंठित दाम्पत्य का एक ही साथ प्रतिभा के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है । भँवर की नायिका प्रतिमा एक सुशिक्षित युवती है । जीवन की सारी सुविधाएँ उसके पास है । धन,सौंदर्य,शिक्षा से युक्त तथा प्रशंसकों से घिरी रहने पर भी वह जीवन से ऊबी हुई है । जीवन की रंगीनियों से उसे कोई दिलचस्पी नहीं है । उसके इस असंतोष का कारण है - प्रथम प्रेम की असफलता । प्रतिमा अपना प्रथम प्रेम निवेदन प्रो.नीलाभ से करती है । परंतु दाम्पत्य जीवन के कटु अनुभव ने उनके जीवन में विरक्ति की भावना जगा दी और अपना शेष जीवन वे अध्ययन,अध्यापन के लिए समर्पित करते हैं ।

प्रथम प्रेम की असफलता से ग्रस्त प्रतिमा अपने सहपाठी सुरेश से शादी

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - कैद और उडान - पृ.२० ।

करती हैं परंतु बौध्दिक असमानता होने के कारण उनका विवाह असफल होता हैं । प्रतिभा अपने जीवनसाथी की कल्पना करती हैं वो वास्तव में काल्पनिक एवं मृग - मरीचिका है, इसीलिए वह अंत तक असफल रहती है ।

प्रतिभा के प्रत्येक कार्यव्यापार पर प्रो.नीलाभ के व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप दिखायी पडती हैं । प्रो.नीलाभ बुध्दिवादी है, अत: प्रतिभाने उसके व्यक्तित्व का आत्मीकरण करते हुए अपने व्यक्तित्व में बौध्दिकता का आरोपन कर लिया है । जीवनसाथी की उसकी कल्पना मृगमरीचिका जैसी है । इसीकारण वह अंत तक असफल रहती हैं ।

इसमें अश्क का उद्देश्य यह स्पष्ट करता है कि प्रेम तथा विवाह के क्षेत्र में कुछ चरित्रगत कमजोरियाँ प्रबुध्द और आकर्षक नारी के जीवन की निराशा तथा विरक्ति में फँसा देती है । प्रतिभा में बुध्दिवादिता और रोमानियत दोनों वर्तमान हैं । प्रतिभा इन दोनों वृत्तियोंसे मुक्त होकर यथार्थवादी दृष्टि अपनाये तो उसके जीवन की समस्या हल हो जाती हैं । हरदत के माध्यम से नाटक की समस्या का समाधान प्रस्तुत किया हैं ---

' रोमान पसंदों की तरह तुम जीवन की दैनिकता से डरती भी हो और उस बेजारी और असंतोष को भी प्रकट करती हो, जो बुध्दिवादियों का खास गुण हैं । देखो तोभा । नन्हीं-नन्हीं खुशियों से दूर न भागो । इन्हीं में जिंदगी ढूँढो । इन्हीं में तुम्हें शांति मिलेगी । '

प्रतिभा जीवन सत्य से अवगत होकर भी काल्पनिक विचारों को छोड न सकी, जो उसकी निराशा के मूल कारण हैं । नाटक के अंत कहे हुए उसके ये शब्द कितने यथार्थ हैं ' हरेक आदमी अपनी खोल के अंदर महज बच्चा हैं ।क्या अपने खोल के भीतर में भी सिर्फ एक बच्ची हूँ, बच्ची, जो चाँद को चाहती हैं और खिलौने से जिसकी तसल्ली नहीं होती । (फिर दीर्घ नि:श्वास लेती है) लेकिन चाँद बहुत ऊँचा हैं - बहुत दूर है - नीलाभ-नीलाभ ऊफ ।

इस प्रकार प्रतिभा अंततक एक ऐसे भँवर में डूबती है, जहाँ से निकलने का कोई रास्ता नहीं है । आजकल की आधुनिक नारी बुद्धिवादिता और रोमानियत - इन दोनों में उचित समन्वय कर ले तो वह निराशा से बच सकती है ।

बड़े खिलाड़ी --

इसमें विवाह समस्या का विवेचन किया गया है । सुजला मध्यवर्गीय परिवार की एक सामान्य पढ़ी-लिखी लड़की है । उसके माता-पिता बगैर उसकी इच्छा जाने उसका विवाह केवल से करते हैं । सुजला विराज को चाहती थी परंतु स्वाभिमानी विराज अपने बलपर सुजला को पाना चाहता था । सुजला अपनी बेबसीपर रोती है । सुजला ही नहीं, उसका सारा परिवार इस शादी से असंतुष्ट है । उसका छोटा भाई छिपे छिपे विरोध करता है ।

आखिर सुजला से बर्बादी से बच जाती है, जिसे अपनी चुप्पी द्वारा आमंत्रित कर लिया था । वैज्ञानिक विकास की दृष्टि से दुनिया बहुत बदल चुकी है । पर हमारे विचार अब भी वहीं पुराने हैं । माँ-बाप सोचते हैं, कि अनुभवहीन जवान लड़कियाँ जीवन साथी चुनने में गलती कर बैठती हैं, इसलिए वे स्वयं भाग्य का निबटारा करने का बीड़ा उठा लेते हैं, बिना यह सोचे कि आखिर उनका निर्णय भी तो एकांगी हो सकता है ।

नाटककार का संकेत यह है, कि माता-पिता के चुनाव में
अत: माता-पिता अपनी संतानों के भाग्य का निर्णय करें किंतु उनसे राय लेना न भूलें । दोनों के सहयोग से ही समस्या का समाधान हो सकता है ।

अंधी गली --

यह हिंदी नाट्य साहित्य में एक नवीन प्रयोग है । यह पूरा नाटक भी है और एकांकी संग्रह भी । भारत विभाजन के बाद जिन समस्याओं एवं भ्रष्टाचारों का सूत्रपात हुआ उन्हीं का चित्र अंधी गली में प्रस्तुत है । शरणार्थी पुर्नवास से सम्बद्ध अधिकारियों की धांधली, रिश्वतखोरी पक्षपात एवं अन्याय का व्यंग्यपूर्ण चित्रण है । `आवास` समस्या नाटक की प्रमुख समस्या है । शरणार्थियों को

आवास को किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, किस प्रकार तंग गलियों और बरामदों में वे जीवन व्यतीत करते रहे, इसका यथातथ्य चित्रण है।

'अंधी गली' निम्नमध्यवर्गीय लोगों के हृदय की उन बंद गलियों का प्रतीक है, जिनके खुल जाने से हमारा जीवन सुखदायी और मंगलमय बन सकता है। त्रिपाठी के माध्यम से यह प्रश्न उठाया गया है। जब वे सुनते हैं कि रामचरण का मकान गिराकर कमेटी अंधी गली को खुलाकर देगी तो उनकी दृष्टि में एक प्रश्न कौंध उठता है कि अंधी गली की समस्या का समाधान हो सकता है यद्यपि उसका समाधान सहज नहीं है क्योंकि ऐसी गलियाँ लाखों हैं, पर हमारे हृदय की जो अंधी गली है, वह कमेटी के खोलने से नहीं खुलेगी और जबतक हमारे हृदय की यह गली नहीं खुलती, तबतक हमारी समस्याओं का वास्तविक समाधान नहीं हो सकता।

अंजोदीदी --

इस समस्या नाटक का केन्द्र है - एक अभिजात्य परिवार जिसके सदस्य सभी दृष्टियों से संपन्न होते हुए भी अपनी जिंदगी नहीं बिता रहे हैं। पूरे परिवार पर अंजो के संस्कार हावी हो गये हैं जो उसे गोद लेनेवाले नाना से विरासत में मिले हैं। अंजो का अखंड 'अहं' टस से मस नहीं होना चाहता। उसका विश्वास है, कि -- 'जीवन स्वयं एक महान घड़ी है। प्रात: संध्या उसकी सुईयाँ हैं।.... मैं चाहती हूँ...... मेरा घर भी घड़ी की ही तरह चलें। हम सब उसके पुर्जे बन जाये और नियमपूर्वक अपना-अपना काम करते जायें।' १

इसी विश्वास के बलपर उसने पूरे परिवार को अपने संस्कारों के अनुरूप ढाल लिया है। अंजो के नानाजी कहा करते थे कि --' वक्त की पाबंदी सभ्यता की पहली निशानी है।' इसी आधार पर अंजो ने नियम बना लिया है, कि ठीक आठ बजे सारा परिवार नाश्ता करें, दिन के एक बजे दोपहर का भोजन, तीन बजे नाश्ता और रात के नौ बजे रात का भोजन होना ही चाहिए। इसमें तनिक भी चूक होना, अंजो को स्वीकार नहीं है।

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ. ।

अंजो का छोटा भाई श्रीपत सैलानी तबीयत का नौजवान है । वह अति का विरोध अति से करता है । अंजो की सनक को तोड़ने के लिए वह एक दर्शन लेकर नाटक में उपस्थित होता है। अपने प्रयत्न में असफल अंजो - आत्महत्या करती है ।

यह परंपरा ओमी के रूप में आगे बढ़ती है । श्रीपत के द्वारा नाटककार अपना उद्देश्य स्पष्ट करता है ---

" अंजो इस घर को घड़ी की तरह चलाना चाहती थी, पर वह न जानती थी कि घड़ी मशीन है और इंसान मशीन नहीं । जब इन्सान मशीन बन जायेगा तो वह दिन दुनिया के लिए सबसे बड़े खतरे का होगा । इन्सान का मशीन बनना, सनक ही का दूसरा नाम है ।" [१]

नाटक का उद्देश्य अति का विरोध कर संतुलित जीवन का मार्ग प्रशस्त करना है, जो प्रतीकात्मक है । नाटक नायिका प्रधान है । नाटक का शीर्षक उपयुक्त एवं सम्पर्क है ।

उपेन्द्रनाथ अश्क हिंदी नाट्य साहित्य में अभूतपूर्व नाटककार है । यथार्थवादी चित्रण, सामाजिक , व्यंग्य और ईमानदाराना अभिव्यक्ति की दृष्टि से वे अजोड़ है ।

---

१ उपेन्द्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ. [illegible] ।